पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

बीबी हुस्नारा बेगम एवं अन्य

बनाम

भवानी देवी एवं अन्य

20 मई 2025

द्वितीय अपील संख्या 276 /1992

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा)

विचार के लिए मुद्दा

- क्या विलेख एक ज़रपेशगी (बंधक) विलेख था या पुनःखरीद के अधिकार सहित विक्रय विलेख था?
- क्या अधीनस्थ न्यायालयों ने मौखिक साक्ष्यों पर यथोचित कारणों के बिना अस्वीकृति की?

हेडनोट्स

जब किसी दस्तावेज़ की उद्घोषणा अस्पष्ट होती है, तभी यह अनुज्ञेय होता है कि पक्षकारों की मंशा जानने के लिए परिस्थितिजन्य तथ्यों पर विचार किया जाए। (पैरा 34)

एक पूर्ण विक्रय विलेख जिसमें स्पष्ट रूप से ऋणी और लेनदार का संबंध नहीं दिखता, केवल इस कारण बंधक नहीं बन जाएगा कि विक्रेता ने पुनः क्रय का अधिकार सुरक्षित रखा है। (पैरा 35)

प्रदर्शित दस्तावेज़ एक विक्रय विलेख है जिसमें पुनः क्रय का विकल्प निहित है, और इसे बंधक (संदिग्ध विक्रय के रूप में) के रूप में निष्पादित नहीं किया गया था। (पैरा 42)

अपील खारिज की जाती है। (पैरा 44)

न्याय दृष्टान्त

पटेल रावजीभाई भुलाभाई बनाम रहीमनभाई एम. शेख, **(2016) 12 एस.सी.सी 216;** श्रीनिवासैया बनाम एच.आर. चन्नबसप्पा, **(2017) 12 एस.सी.सी 821;** वंचलाबाई रघुनाथ इथापे बनाम शंकरराव बाबूराव भिलारे, **(2013) 7 एस.सी.सी 173;** मधुलाल सिंह बनाम धोन्गा मंडल, **ए.आई.आर 1983 पैट 60;** चुंचुन झा बनाम एबादत अली, **(1954) 1 एस.सी.सी 699;** भोजू मंडल बनाम देबनाथ भगत, **ए.आई.आर 1963 एस.सी 1906** प्रकाश (मृतक) बनाम जी. अराध्य, सिविल अपील संख्या **706/2015;** गणपति बाबजी आलमवार (मृतक) बनाम दिगम्बरराव भदके, सिविल अपील संख्या **3960/2011;** समित्रि देवी एवं अन्य बनाम संपूर्ण सिंह एवं अन्य, सिविल अपील संख्या **846/2011** पं. चंचुन झा बनाम शेख अबादत अली, **(1954) 1 एससीसी 699;** भास्कर वामन जोशी (मृत) एवं अन्य बनाम श्रीनारायण रामबिलास अग्रवाल (मृत) एवं अन्य, **एआईआर 1960 एससी 301**

अधिनियमों की सूची

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908; संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (धारा 58(सी), 60, 83)

मुख्य शब्दों की सूची

शर्तसहित बंधक विक्रय; ज़रपेशगी विलेख; पुनःखरीद का अधिकार; मुक्ति वाद; प्रदर्श-सी की व्याख्या; धारा 58(सी) टी.पी. अधिनियम; प्रतिफल की पर्याप्तता; मौखिक साक्ष्य; अस्वीकृति; बैमियादी पंचसाला

प्रकरण से उत्पन्न

टाइटल अपील संख्या 36/1989 में माननीय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-VI, सिवान द्वारा पारित दिनांक 20.05.1992 एवं 20.06.1992 के निर्णय एवं आदेश से उत्पन्न, जो उप न्यायाधीश-VI, सिवान द्वारा टाइटल वाद संख्या 143/1979 में पारित दिनांक 08.03.1989 एवं 09.04.1989 के आदेश को बरकरार रखता है।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

वादकारियों की ओर से: श्री कमल नयन चौबे, वरिष्ठ अधिवक्ता; श्री राकेश कुमार श्रीवास्तव, अधिवक्ता

विपक्षी की ओर से: श्री गणपति त्रिवेदी, वरिष्ठ अधिवक्ता; श्री दीपक कुमार सिन्हा, अधिवक्ता; सुश्री ऐश्वर्या श्री, अधिवक्ता

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट्स बनाया गया: अमित कुमार मल्लिक, अधिवक्ता

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

1992 का द्वितीय अपील संख्या 276

==========

1. बीबी हुस्नारा बेगम, पति- बाबू मोहम्मद अयूब साहब मृत, निवासी मोहल्ला-तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

2. शमीम जावेद, पति- मोहम्मद जावेद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

3. शादाब जावेद, पिता- मोहम्मद जावेद मृत, निवासी मोहल्ला-तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

4. जेसान ज़ावेद, पिता- मोहम्मद जावेद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

5.1. मो. साकिब, पिता- स्वर्गीय मो. साहब, निवासी- गाँव- चटनासूल, थाना- नवाबगंज, जिला- गोंडा (यू.पी.)।

5.2. अज़नी साहब, पिता- स्वर्गीय मो. साहब, पति- मुबाराक हुसैन, निवासी- गाँव- चटनासूल, थाना- नवाबगंज, जिला- गोंडा (यू.पी.)।

6. मो. साल्डल, पिता- मो. अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

7. मो. शाहिद, पिता- मो. अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

8. मो. अकील उर्फ मो. वकील, पिता- मो. अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

9. मो. आफताब, पिता- मोहम्मद अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

10. साहनाज अयूब, पिता- मोहम्मद अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

11. सबाना अयूब, पिता- मोहम्मद अयूब, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

12. मो. हामिद, पिता- बाबू मो. हबीब साहब मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

13. मो. अहमद, पिता- बाबू मोहम्मद हबीब साहब मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

14.1. मो. फैसल मसूद, पिता- स्वर्गीय मो. मसूद, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

14.2. सुम्बुल मसूद, पति- ज़िसान अहमद, पिता- स्वर्गीय मोहम्मद मसूद, निवासी- पता- घर नं.- डी.34, करैली, थाना- करैली, जिला- इलाहाबाद (यू.पी.)।

15. सईदा बेगम उर्फ साहिबा बेगम, पिता- बाबू मोहम्मद हबीब साहब मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

16. बीबी अस्मा उर्फ आसिया महमूद, पिता- बाबू मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

17. जमाल अहमद उर्फ जमाल महमूद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

18. मो. एजाज़ उर्फ अज़ाजे महमूद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

19. मो. इमरान उर्फ इमरान मोहम्मद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

20. इशाक अहमद उर्फ इशाक मोहम्मद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

21. अफजल महमूद उर्फ आफताब अहमद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

22. इकबाल महमूद उर्फ अकबल अहमद, पिता- मोहम्मद महमूद मृत, निवासी मोहल्ला- तेलहट्टा बाजार, थाना - सिवान टाउन, जिला- सिवान।

... ... अपीलकर्ता/ओं

बनाम

1.1. भवानी देवी, पति- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.2. प्रेम कुमार अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.3. दिलीप कु. अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.4. अजीत कु. अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.5. अतुल कु. अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.6. संजय कुमार अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.7. रेणु अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.8. रीता अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.9. मुन्नी अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

1.10. उषा अग्रवाल, पिता- स्वर्गीय द्वारिका प्रसाद अग्रवाल, निवासी- मोहल्ला- अग्रवाल टोली, सीवान नगर, थाना- सीवान, नगर, जिला-सीवान।

.....उत्तरदाता/ओं

==========

उपस्थितिः

अपीलार्थी/ओं के लिए	:	श्री कमल नयन चौबे, वरिष्ठ अधिवक्ता
		श्री राकेश कुमार श्रीवास्तव, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी/ओं के लिए	:	श्री गणपति त्रिवेदी, वरिष्ठ अधिवक्ता
		श्री दीपक कुमार सिन्हा, अधिवक्ता
		सुश्री ऐश्वर्या श्री, अधिवक्ता

==========

समक्षः माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा

कैव निर्णय

दिनांकः 20-05-2025

यह तात्कालिक अपील सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे संहिता कहा जाएगा) की धारा 100 के अंतर्गत विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-VI, सीवान द्वारा शीर्षक अपील संख्या 36/1989 में पारित दिनांक 20.05.1992 और 20.06.1992 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दायर की गई है, जिसके तहत विद्वान निचली अपीलीय अदालत ने अपील को खारिज कर दिया और विद्वान उप न्यायाधीश-VI, सीवान द्वारा

टाइटल वाद संख्या 143/1979 में पारित दिनांक 08.03.1989 और 09.04.1989 के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की, जिसके द्वारा वाद को खारिज कर दिया गया था।

02. अपीलार्थी 1979 के स्वामित्व वाद सं. 143 के वादी थे और प्रतिवादी/उत्तरदाता था। जैसे ही स्वामित्व वाद खारिज किया गया, वादी ने 1989 की स्वामित्व वाद अपील संख्या 36 को प्राथमिकता दी, जिसे फिर से खारिज कर दिया गया और दो समवर्ती निष्कर्षों के खिलाफ, वादी ने दूसरी अपील में इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है। सुविधा के लिए, मैं तत्काल दूसरी अपील के अपीलार्थियों को वादी और उत्तरदाताओं को प्रतिवादी के रूप में संदर्भित करूंगा।

वादी का मामलाः

03. एक बीबी अकीकुल निसा मूल वादी संख्या 10 से 13 की माँ, वादी संख्या 1 और 14 की सास और वादी संख्या 2 से 9 और 15 से 20 की दादी थी। उत्तरदाता मूल प्रतिवादी के वंशज हैं। बीबी अकीकुल निसा की मृत्यु के बाद, मूल वादी और वादी संख्या 6 से 12 के उत्तराधिकारी। ने उसकी संपत्ति पर कब्जा कर लिया। बीबी अकीकुल निसा ने विवादित संपत्ति के लिए रुपये 7337/- की राशि के लिए एक ज़र्पेशी (बंधक) विलेख मूल प्रतिवादी द्वारिका प्रसाद के पक्ष में निष्पादित किया और मूल प्रतिवादी को संपत्ति के कब्जे में डाल दिया। यह बंधक विलेख 24.03.1953 को निष्पादित किया गया था और पांच साल की अवधि के लिए था जो 24.03.1958 को समाप्त हो गया था। वादी का आगे का मामला यह था कि अवधि समाप्त होने के बाद, बंधक विलेख को वापस करने और वाद संपत्ति का कब्जा सौंपने के अनुरोध के साथ प्रतिवादी को धन दिया गया था। चूंकि प्रतिवादी पैसे लेने और बंधक विलेख को वापस करने और वादी को कब्जा सौंपने के लिए सहमत नहीं था, इसलिए संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम (संक्षेप में 'टी. पी. अधिनियम') की धारा 83 के तहत 03.05.1975 को अदालत में

चालान के माध्यम से धन (प्रतिफल राशि) जमा किया गया था। इसके बाद, 1978 का विविध मामला संख्या 23 टी. पी. अधिनियम की धारा 83 के तहत स्थापित किया गया था और 08.05.1975 को प्रतिवादी को एक नोटिस दिया गया था, लेकिन उसने प्रतिफल राशि स्वीकार नहीं की और क्योंकि उसने धन स्वीकार नहीं किया और विवादित संपत्ति का कब्जा वादी को नहीं सौंपा, इसलिए वादी ने मोचन के लिए 1979 का स्वामित्व वाद संख्या 143 दायर किया।

<u>प्रतिवादियों का मामलाः</u>

04. मूल प्रतिवादी ने वादी के तर्क को कई आधारों पर यह कहते हुए चुनौती दी कि मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं था और वादी को कार्रवाई का कोई कारण नहीं मिला है और यह भी कि मुकदमा तथ्यों पर समय बाधित था। प्रतिवादी ने दावा किया कि 24.03.1953 को, कोई ज़र्पेश्गी विलेख निष्पादित नहीं किया गया था। प्रतिवादी ज़ेरपेशगीदार (बंधक) के रूप में नहीं बल्कि एक खरीदार के रूप में मुकदमा संपत्ति के कब्जे में आया। प्रतिवादी ने कहा कि इससे पहले बीबी अकीकुल निसा ने रुपये 3,200/- की राशि प्राप्त करने के बाद 03.01.1950 को एक बंधक विलेख निष्पादित किया था और प्रतिवादी को वाद संपत्ति पर कब्जे में रखें। मार्च 1953 में, बीबी अकीकुल निसा को और अधिक धन की आवश्यकता थी और इसलिए, वह मुकदमे की संपत्ति को प्रतिवादी के पक्ष में रुपये 7337/- की प्रतिफल राशि पर बेचने के लिए सहमत हो गई। दोनों पक्षों के बीच इस बात पर भी सहमति बनी कि अगर बीबी अकीकुल निसा प्रतिवादी को 24.03.1958 तक रु. 7337/- वापस करेंगी, तब प्रतिवादी विवादित संपत्ति के लिए बीबी अकीकुल निसा के पक्ष में एक बिक्री विलेख निष्पादित करेगा और इस व्यवस्था के तहत, बीबी अकीकुल निसा ने 24.03.1953 को 7337/- रुपये के लिए एक पंजीकृत बिक्री विलेख निष्पादित किया, जिसमें से

3,200/- रुपये दिनांकित 03.01.1950 के पूर्व बंधक विलेख की प्रतिफल राशि को समायोजित किया गया था। प्रतिवादी ने आगे प्रस्तुत किया कि 24.03.1953 को बीबी अकीकुल निसा द्वारा निष्पादित किया गया विलेख पूरी तरह से पुनर्खरीद की शर्त के साथ एक बिक्री-विलेख था और बीबी अकीकुल निसा ने 24.03.1953 के विलेख को निष्पादित करके प्रतिवादी को मुकदमा संपत्ति में अपना पूरा हित हस्तांतरित कर दिया। विलेख के निष्पादन के बाद, बीबी अकीकुल निसा का मुकदमे की संपत्ति पर कोई अधिकार, स्वामित्व या हित नहीं था और प्रतिवादी मालिक के रूप में कब्जे में आ गया और तब से, वह मालिक के रूप में विवादित संपत्ति पर शांतिपूर्ण कब्जे में बना हुआ है। बीबी अकीकुल निसा की निर्धारित समय की समाप्ति के तुरंत बाद मृत्यु हो गई और उससे पहले, 23.02.1958 को, प्रतिवादी ने बीबी अकीकुल निसा को डाक प्रमाण पत्र के तहत इस आशय का नोटिस दिया था कि अगर वह 24.03.1958 तक प्रतिवादी को प्रतिफल राशि का भुगतान नहीं करती है, तो उसका पुनर्खरीद का अधिकार समाप्त हो जाएगा। बीबी अकीकुल निसा ने न तो नोटिस का कोई जवाब दिया और न ही प्रतिफल राशि का भुगतान किया। इसलिए, बीबी अकीकुल निसा के पुनर्खरीद का अधिकार 24.03.1958 को समाप्त हो गया। बीबी अकीकुल निसा और प्रतिवादी के बीच बंधककर्ता और बंधकदार का कोई संबंध नहीं था। प्रतिवादी ने आगे कहा कि उसने 09.08.1952 को मुकदमे की जमीन का दक्षिणी हिस्सा शेख मोहम्मद सादिक से भी खरीदा था और उसके कब्जे में आ गया। प्रतिवादी ने वादी द्वारा टी. पी. अधिनियम की धारा 83 के तहत अदालत में 7337/- रुपये जमा करने के बारे में किसी भी जानकारी से इनकार किया और आगे प्रस्तुत किया कि उन्हें 1975 का विविध मामला सं. 23 में कोई नोटिस नहीं दिया गया था।

विचारण न्यायालय के निष्कर्ष -

05. विद्वत विचारण न्यायालय ने पक्षकारों की दलीलों और उसके समक्ष उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर, निम्नलिखित मुद्दों को तैयार कियाः-

"1) क्या निर्धारित किए गए वाद को बनाए रखा जा सकता है?

2) क्या वादी/वादियों के पास मुकदमे के लिए कार्रवाई का कोई कारण है?

3) क्या 24.03.1953 दिनांकित विलेख एक ज़र्पेशगी विलेख है या फिर से खरीदने के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख है?

4) क्या प्रतिवादी के पास वादी द्वारा लगाए गए आरोप के अनुसार एक बंधकग्राही के रूप में वाद भूमि का कब्जा है?

5) क्या अदालत में धन जमा करने और प्रतिवादी को नोटिस देने की कहानी सही है?

6) वादी किस राहत, यदि कोई हो, के हकदार हैं? "

06. विद्वत विचारण न्यायालय ने अपना निष्कर्ष दर्ज किया कि निर्णय लिया जाने वाला सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा मुद्दा संख्या 3, अर्थात "क्या 24.03.1953 दिनांकित विलेख एक ज़र्पेश्गी विलेख है या विलेख के निष्पादन के पांच साल के भीतर फिर से खरीदने के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख है?" इसके बाद, मुकदमे/विचारण में प्रस्तुत किए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों के विश्लेषण पर, विद्वत विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि 24.03.1953 दिनांकित विलेख एक बिक्री विलेख था और धन की पेशकश करने का कोई सवाल ही नहीं था और प्रतिवादी एक खरीदार के रूप में संपत्ति के कब्जे में थी न कि एक बंधकग्राही के रूप में और इस प्रकार, यह निष्कर्ष पर पहुंचा कि 24.03.1953 दिनांकित विलेख 24.03.1953 से पांच साल के

भीतर पुनर्खरीद के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख है और क्योंकि बीबी अकीकुल निसा ने 23.03.1958 तक प्रतिवादी को प्रतिफल राशि नहीं दी थी, इसलिए प्रतिवादी का मुकदमा/वाद संपत्ति के स्वामित्व का अधिकार अपरिवर्तनीय हो गया। इस तरह, विद्वत विचारण न्यायालय ने वादी द्वारा दायर मुकदमे को खारिज कर दिया।

<u>प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्ष -दस्तावेजों की सूची</u>

07. जब यह मुद्दा विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष आया, तो विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह भी विचार व्यक्त किया कि उपरोक्त मुद्दा संख्या 3 मामले की जड़ तक जाता है और इस मुद्दे पर गौर करता है कि क्या 24.03.1953 दिनांकित विलेख एक ज़र्पेश्गी विलेख था या विलेख के निष्पादन के पांच साल के भीतर फिर से खरीद के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख था और सीमा का मुद्दा भी, जो उसके समक्ष निर्धारण के लिए निम्नलिखित दो बिंदुओं को प्रस्तुत किया गया थाः

> *(i) क्या 24.03.1953 दिनांकित विलेख एक ज़र्पेश्गी विलेख है या पुनर्खरीद के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख है?*
>
> *(ii) क्या अपील परिसीमा के कानून द्वारा वर्जित है?*

08. विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पक्षों द्वारा प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य प्रथम अपील के निपटारे के लिए महत्वपूर्ण नहीं था और प्रतिवादी के दो दस्तावेजी साक्ष्यों को ध्यान में रखा अर्थात, (i) 24.03.1953 दिनांकित विलेख (प्रदर्श-सी) और (ii) 03.01.1950 दिनांकित ज़ेरपेशगी विलेख (प्रदर्श- जी)।

09. विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने विलेख की प्रकृति की विस्तार से जांच की और विचारण न्यायालय की तरह, इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि 24.03.1953

दिनांकित विलेख पुरी तरह से एक बिक्री विलेख था और सशर्त बिक्री द्वारा बंधक का विलेख नहीं था और इस कारण से, वादी को मोचन का कोई अधिकार नहीं है। साथ ही, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी अपना निष्कर्ष दर्ज किया कि अपील परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं थी।

इस न्यायालय का विश्लेषणः

कानून का महत्वपूर्ण प्रश्नः

10. दूसरी अपील को स्वीकार करने के बाद, इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस दूसरी अपील में विचार के लिए कानून के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रश्न को तैयार कियाः

> 'प्रदर्श-सी की सही व्याख्या क्या है और क्या मौखिक साक्ष्य को बिना कोई कारण बताए खारिज किया जा सकता है?'

अपीलार्थियों की ओर से प्रस्तुतिकरणः

11. वादी/अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री कमल नयन चौबे ने प्रस्तुत किया कि अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय और फरमान/डिक्री कानून के अनुसार नहीं हैं और अलग/रद्द किए जाने के योग्य हैं। श्री चौबे ने आगे कहा कि विद्वान अधीनस्थ अदालतों ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि 24.03.1953 दिनांकित विलेख (जिसे इसके बाद 'प्रदर्श-सी' के रूप में संदर्भित किया गया है) पुनर्खरीद के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख था, जबकि यह एक *ज़र्पेश्गी* विलेख (बंधक विलेख) था। विद्वान अधीनस्थ अदालतें प्रदर्श-सी की वास्तविक प्रकृति को समझने में पूरी तरह से विफल रहीं, जिसमें कॉलम-3 में उल्लेख किया गया है कि यह एक '*बैमियादी पंचशाला*' थी। इसलिए, यह निष्कर्ष कि बंधककर्ता और बंधकदार का

कोई संबंध नहीं था, प्रदर्श-सी के गलत मूल्यांकन और गलत अध्ययन पर आधारित था। अधीनस्थ अदालतें बीबी अकीकुल निसा द्वारा विलेख को निष्पादित करते समय इरादे को देखने में विफल रहीं। इरादा बंधक बनाने का था और उक्त इरादे का अनुमान उपस्थित परिस्थितियों और विचार की पर्याप्तता से लगाया जाना था। यदि एक ही संपत्ति के लिए, बंधक विलेख 1950 में 3,200/- रुपये की राशि का बंधक विलेख निष्पादित किया गया था, वही संपत्ति 1953 में केवल 7337/- रुपये की राशि में खरीदने के लिए तैयार नहीं होगी। विचार की इस अपर्याप्तता को ध्यान में नहीं रखा गया था। श्री चौबे ने आगे कहा कि पक्षों के बीच लेन-देन की प्रकृति से पता चलता है कि इरादा बंधक बनाने का था और पक्षों के बीच संबंध देनदार और लेनदार की तरह था और पुनर्खरीद के अधिकार के साथ सूट/वाद संपत्ति को बिक्री के लिए रखने का कोई इरादा नहीं था। अधीनस्थ अदालतें आगे यह समझने में विफल रहीं कि खरीदार को पांच साल के बाद विक्रेता के पक्ष में स्वामित्व को फिर से देने की शर्त के साथ प्रतिबंध के तहत नहीं रखा जा सकता है।

12. श्री चौबे ने **प*टेल रविभाई भुलाभाई (मृत) विधिक प्रतिनिधि द्वारा बनाम रहेमानभाई एम. शेख (मृत) विधिक प्रतिनिधि और अन्य द्वारा,*** के मामले में, **(2016) *12 एस.सी.सी. 216*** में प्रतिवेदित, माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक दस्तावेज (प्रदर्श-23) को पढ़ते हुए, प्रदर्श-23 में उस शर्त का अवलोकन किया कि यदि वादी (उत्तरदाता) पांच साल की अवधि के भीतर 10,000/- का पुनर्भुगतान करते हैं, तो प्रतिवादी वाद में संपत्ति का कब्जा वादी को वापस सौंप देंगे, इससे यह परिलक्षित होता है कि पक्षों के बीच वास्तविक लेनदेन ऋण का था, और संबंध देनदार और लेनदार का था, इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि प्रश्नगत विलेख प्रदर्श-37 के साथ पठित प्रदर्श-23 सशर्त बिक्री के रूप में एक बंधक है। श्री चौबे ने इसके बाद

श्रीनिवासैया बनाम एच. आर. चन्नबसप्पा (मृत होने के बाद से) अपने विधिक प्रतिनिधि और अन्य द्वारा, (2017) 12 एस.सी.सी. 821 में रिपोर्ट किया गया, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय का उल्लेख किया, जिसमें प्रदर्श पी/1 की प्रकृति की जांच/परीक्षण करते हुए टी. पी. अधिनियम की धारा 58 (सी) के दायरे और ***पंडित चुनचुन झा बनाम एस. के. इबादत अली, (1954) 1 एस.सी.सी. 699*** में सूचित, के मामले में निर्धारित परीक्षण पर विचार करते समय, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी राय व्यक्त की कि दस्तावेज़ (Ex.P-1) टी. पी. अधिनियम की धारा 58 (सी) के तहत परिभाषित सशर्त बिक्री के साथ एक बंधक है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने विचार के लिए निम्नलिखित कारण दिएः सबसे पहले, यह विवाद में नहीं था कि वादी वाद भूमि का मालिक था। दूसरा, पक्षों ने एक दस्तावेज़ (Ext.P-1) को निष्पादित करके विचाराधीन लेनदेन का समापन किया। तीसरा, दस्तावेज़ (Ext.P-1) को "डीड ऑफ कंडीशनल सेल/सशर्त बिक्री का विलेख" के रूप में शैलीबद्ध किया गया है। चौथा, इसमें एक शर्त है कि प्रतिवादी संख्या 1 को 5 साल तक वाद संपत्ति के कब्जे में बने रहने और भूमि के फल का आनंद लेने की अनुमति दी जाएगी और इस अवधि के दौरान, वादी अपने नाम पर बिक्री विलेख निष्पादित करके और प्रतिवादी संख्या 1 से वाद भूमि का कब्जा प्राप्त करके 1500/- रुपये का भुगतान करने पर अपने नाम पर वाद संपत्ति को फिर से प्राप्त करने का हकदार होगा। अंत में, वादी ने प्रतिवादी नंबर 1 को भूमि को फिर से बेचने के अनुरोध के साथ 1500/- रुपये का भुगतान करने की पेशकश की। इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उपरोक्त पाँच कारणों ने टी. पी. अधिनियम की धारा 58 (सी) की तीसरी शर्त को संतुष्ट किया, अर्थात्, इस शर्त पर कि ऐसा भुगतान किया जा रहा है, खरीदार संपत्ति को विक्रेता को हस्तांतरित करेगा।" इसने ***चुनचुन झा*** के मामले (उपरोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों को भी संतुष्ट किया। पहला,

लेन-देन एक दस्तावेज़ में समाप्त होता है; दूसरा, "सशर्त बिक्री विलेख" के रूप में शैलीबद्ध दस्तावेज़ में ही बिना ब्याज के बिक्री के पैसे की पेशकश करने पर पुनर्खरीद की शर्त होती है क्योंकि प्रतिवादी संख्या 1 को तब तक भूमि का उपयोग करने की अनुमति दी गई थी जब तक कि विक्रेता द्वारा उसे पैसे वापस नहीं किए गए थे; और तीसरा, प्रदर्श पी-1 की शर्तों के अनुसार पक्षों के इरादे का भी सबूत द्वारा समर्थन किया गया था जिसे दो अदालतों-विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था।

13. श्री चौबे ने इस प्रकार प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले के तथ्य ***श्रीनिवासैया (उपरोक्त)*** के मामले के समान हैं। श्री चौबे ने आगे प्रस्तुत किया कि 24.03.1953 (प्रदर्श-C) के विलेख में पाठ यह स्पष्ट करता है कि यह एक बंधक विलेख था जिसमें यह शर्त थी कि पांच साल के बाद, प्रतिवादी को संपत्ति का पुनः हस्तांतरण करने की आवश्यकता होगी, अगर बंधक राशि उसके द्वारा भुगतान की गई थी और इस कारण से, विलेख को उसमें 'बैमियादी पंचशाला' का उल्लेख करके निष्पादित किया गया था।

14. ***वंचलाबाई रघुनाथ इथापे बनाम शंकरराव बाबूराव भिलारे, (2013) 7 एस. सी. सी. 173,*** के मामले में निर्णय का उल्लेख करते हुए, श्री चौबे ने प्रस्तुत किया कि दस्तावेज़ की प्रकृति के निर्धारण के लिए, पक्षों के इरादे को प्रधानता दी जानी चाहिए/है और इरादे को विलेख की शर्तों से एकत्र किया जाना चाहिए/है। श्री चौबे ने आगे **मधु लाल सिंह बनाम ढोंगा मंडल, ए. आई. आर. 1983 पटना 60** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले पर भरोसा किया, जिसमें उक्त निर्णय के पैरा-8 में विद्वत एकल न्यायाधीश ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

*"**8.** इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि दस्तावेज़ के निर्माण के संबंध में कानून अच्छी तरह से स्थापित है, अर्थात्, इरादे को पहले स्थान पर दस्तावेज़ की भाषा से एकत्र किया जाना चाहिए और यदि शब्द स्पष्ट और स्पष्ट हैं, तो उन्हें प्रभाव दिया जाना चाहिए, और जो सोचा गया था या इरादा था, उसकी किसी भी बाहरी जांच को खारिज कर दिया जाता है। ऐसे मामले में असली सवाल यह नहीं है कि पक्षकारों का क्या इरादा था या उनका क्या मतलब था, बल्कि यह है कि उन्होंने जो शब्द इस्तेमाल किए हैं, उनका कानूनी प्रभाव क्या है। हालाँकि, यदि प्रयुक्त भाषा में संदिग्धता है, तो आसपास की परिस्थितियों को देखने की अनुमति है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या इरादा था। यह सिद्धांत **चुनचुन झा बनाम एबादत अली (ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 345)** के मामले मेंनिर्धारित किया गया है। इसका निर्णय का अनुच्छेद 14 इस प्रकार हैः—*

> *"अब, जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, एक बार जब कोई लेन-देन दो नहीं बल्कि एक दस्तावेज़ में सन्निहित हो जाता है और एक बार जब इसकी शर्तें धारा 58 (सी) द्वारा आच्छादित की जाती हैं, तो इसे सशर्त बिक्री द्वारा बंधक माना जाना चाहिए, जब तक कि इसके विपरीत इंगित करने के लिए अभिव्यक्त शब्द न हों, या संदिग्धता के मामले में, सहायक परिस्थितियाँ अनिवार्य रूप से विपरीत निष्कर्ष की ओर ले जाती हैं।"*

उपरोक्त मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले के पैरा 8 के एक हिस्से को यहाँ उद्धृत करना भी प्रासंगिक होगा। वह इस प्रकार हैः —

> *"विधायिका ने एक स्पष्ट वर्गीकरण किया है और एक से अधिक दस्तावेजों में सन्निहित लेन-देन को बंधक की श्रेणी से बाहर रखा है, इसलिए यह मान लेना उचित है कि जो व्यक्ति संशोधन के बाद दो दस्तावेजों का उपयोग नहीं करना चाहते हैं, वे लेनदेन को बिक्री के रूप में नहीं लेना चाहते हैं, जब तक कि वे उस धारणा को स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों से प्रतिस्थापित नहीं करते हैं; और यदि धारा 58 (सी) की शर्तों को पूरा किया जाता है, तो हमारी राय है कि विलेख को बंधक के रूप में माना जाना चाहिए।"*

उपरोक्त सिद्धांतों को दस्तावेज़ के निर्माण के लिए कुछ व्यापक सिद्धांत कहा जाता है। उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचार के लिए दस्तावेज़ के प्रासंगिक खंडों को पैरा 9 में उद्धृत किया गया है, और यह माना गया है कि उस दस्तावेज़ की भाषा कठिनाई से मुक्त नहीं थी और संदिग्धता थी। तदनुसार, उस मामले के उत्तरदाताओं द्वारा सहायक परिस्थितियों पर चर्चा की गई और अंततः यह माना गया कि उस मामले में दस्तावेज़ सशर्त बिक्री द्वारा बंधक था। "

15. श्री चौबे ने आगे **चुनचुन झा** (उपरोक्त) के प्रसिद्ध मामले में निर्णय पर भरोसा किया, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा-5 और 6 में निम्नानुसार निर्णय दियाः

*"**5.** सवाल यह है कि क्या दिया गया लेन-देन सशर्त बिक्री द्वारा बंधक है, या पुनर्खरीद की शर्त के साथ एकमुश्त बिक्री एक परेशान करने वाली है जो हमेशा परेशानी और मुकदमेबाजी को जन्म देती है। इस मुद्दे पर कई निर्णय लिए गए हैं और कुछ उच्च न्यायालयों में उनका संकलन और विश्लेषण करने के लिए बहुत सारे उद्योग खर्च किए गए हैं/काफी मेहनत की है। । हम सोचते हैं कि यह एक निष्फल कार्य है क्योंकि दो दस्तावेजों को शायद ही कभी समान शब्दों में व्यक्त किया जाता है और जब सहायक परिस्थितियों पर विचार करना आवश्यक होता है तो अभेद्य चर जो इसकी गति में लाते हैं, एक मामले की दूसरे से तुलना करना असंभव बना देते हैं। प्रत्येक को इसके अपने तथ्यों पर निर्णय लेना चाहिए। लेकिन कुछ व्यापक सिद्धांत बने हुए हैं।*

***6.** पहला यह है कि पक्षों का इरादा निर्धारित करने वाला कारक हैः देखें बाल्किशेन दास बनाम लेगे [बाल्किशेन दास बनाम लेगे, 1899 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 32 : (1899-1900) 27 आइए 58]। लेकिन इस वर्ग के मामलों में इसके बारे में कुछ भी विशेष नहीं है और यहाँ, हर दूसरे मामले की तरह जहाँ एक दस्तावेज़ का अर्थ लगाया जाना है, इरादे को, सबसे पहले, दस्तावेज़ से ही एकत्र किया जाना चाहिए। यदि शब्द अभिव्यक्त और स्पष्ट हैं, तो उन्हें प्रभाव दिया जाना चाहिए और जो सोचा गया था या इरादा था, उसकी किसी भी बाहरी जांच को खारिज कर दिया जाता है। ऐसे मामले में वास्तविक सवाल यह नहीं है कि पक्षकारों का क्या इरादा था या उनका क्या मतलब था, बल्कि यह है कि उन्होंने जो शब्द इस्तेमाल किए हैं,*

उनका कानूनी प्रभाव क्या है। हालाँकि, यदि प्रयुक्त भाषा में संदिग्धता है, तो आसपास की परिस्थितियों को देखने की अनुमति है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या इरादा था। जैसा कि लॉर्ड क्रैनवर्थसाइडिन एल्डरसन बनाम व्हाइट [एल्डरसन बनाम व्हाइट, (1858) 2 डी जी एंड जे 97 : 44 ई. आर. 924 पृष्ठ 928 पर] : (ई. आर. पृष्ठ 928)।

> *"... इस विषय पर कानून का शासन सामान्य ज्ञान द्वारा निर्धारित है; जो प्रथम दृष्टया एक पूर्ण हस्तांतरण है, जिसमें यह दिखाने के लिए कुछ भी शामिल नहीं है कि देनदार और लेनदार का संबंध पक्षों के बीच मौजूद है, एक पूर्ण हस्तांतरण नहीं है और केवल इसलिए बंधक बन जाता है क्योंकि विक्रेता निर्धारित करता है कि उसे पुनर्खरीद करने का अधिकार होगा। ऐसे प्रत्येक मामले में सवाल यह है कि एक निष्पक्ष निर्माण पर उपकरणों का क्या अर्थ है?"*

प्रिवी काउंसिल के उनके प्रभुत्त्व ने भगवान सहाय बनाम भगवान दिन [भगवान सहाय बनाम भगवान दिन, 1890 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 3 : (1889-90) 17 आई. ए. 98 पृष्ठ 102] में और झंडा सिंह बनाम वाहिद-उद-दीन [झंडा सिंह बनाम वाहिद-उद-दीन, 1916 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 61 : (1915-16) 43 आई. ए. 284 पृष्ठ 293 : (1917) 5 एलडब्ल्यू 189] में भारत में इस नियम को लागू किया।

16. श्री चौबे ने आगे कहा कि चूंकि प्रदर्श ी-सी की अधीनस्थ अदालतों द्वारा सही व्याख्या नहीं की गई है और यहां तक कि इस बिंदु के समवर्ती निष्कर्ष को भी कायम नहीं रखा जा सका है। श्री चौबे ने आगे कहा कि दोनों अधीनस्थ अदालतों ने बिना कोई कारण बताए मौखिक साक्ष्य को वस्तुतः खारिज कर दिया और इस प्रकार, निर्णय और फरमान गंभीर दोष से ग्रस्त हैं। इसके अलावा, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय को मौखिक साक्ष्य की अस्वीकृति के बारे में अपने निर्णय के कारण प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी, लेकिन उसने आदेश 41 नियम 31 के तहत उस पर लगाए गए अपने दायित्वों का त्याग कर दिया। इस प्रकार, श्री चौबे ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान दूसरी अपील विद्वान अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णयों और फरमानों को दरकिनार करने के बाद अनुमति देने के लिए उपयुक्त है।

<u>उत्तरदाताओं की ओर से प्रस्तुतिकरणः</u>

17. दूसरी ओर, उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री गणपति त्रिवेदी ने शुरू में कहा कि पूरा मुद्दा प्रदर्श-सी की सही व्याख्या के इर्द-गिर्द घूमता है। अब, प्रदर्श-सी की सामग्री को पढ़ने से, श्री त्रिवेदी ने प्रस्तुत किया, प्रदर्श-सी की सामग्री से यह स्पष्ट है कि बीबी अकीकुल निसा का इरादा प्रतिवादी को अपना स्वामित्व हस्तांतरित करना था और वह केवल अपने पुनर्खरीद के अधिकार की रक्षा करना चाहती थी। यदि प्रतिवादी को स्वामित्व प्रदान करने का इरादा था, तो दस्तावेज़ को सशर्त बिक्री द्वारा बंधक नहीं कहा जा सकता था। बीबी अकीकुल निसा कोई ऋण नहीं चाहती थी और उसने अपनी जिम्मेदारी को समाप्त करने के लिए सूट संपत्ति की बिक्री में प्रवेश किया जैसा कि प्रदर्श ी-सी में उल्लेख किया गया है। श्री त्रिवेदी ने आगे कहा कि नामकरण महत्वपूर्ण नहीं था और भले ही दस्तावेज़ को बैमियादी पंचशाला के रूप में उल्लेख किया गया हो, दस्तावेज़ का संपूर्ण पाठ देखा जाना चाहिए।

श्री त्रिवेदी ने दोहराया कि इरादा संपत्ति को हस्तांतरित करने का था और न कि उस पर ऋण लेने या उसे गिरवी रखने का। पाठ से यह भी पता चलता है कि यह सशर्त बिक्री द्वारा बंधक नहीं था। श्री त्रिवेदी ने ***ए.आई.आर. 1963 एस.सी. 1906 में सूचित भोजू मंडल बनाम देबनाथ भगत*** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का उल्लेख किया, जिसमें ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले के तथ्यों को अलग करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि एक दस्तावेज़ के तहत पक्षों के इरादे का पता लगाने के लिए, दूसरे दस्तावेज़ की शर्तों के निर्माण पर निर्णय आमतौर पर कोई मार्गदर्शन नहीं दे सकता है, जब तक कि शर्तें एक दूसरे के बिल्कुल समान न हों। माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस परिस्थिति का उल्लेख किया कि छोटे राशि के लिए बड़े भूभाग के पहले बंधक के निर्वहन में एक छोटी भूभाग को अधिक/उच्च राशि के लिए बेचा गया था, जो ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले में मौजूद नहीं था और आसपास की परिस्थितियों के संदर्भ में दस्तावेज़ की शर्तों के संचयी प्रभाव पर विचार करते हुए, कहा कि विचाराधीन दस्तावेज़ एक बंधक नहीं था, बल्कि पुनर्खरीद की शर्त के साथ एक बिक्री थी और उच्च न्यायालय के निर्णय को बरकरार रखा। श्री त्रिवेदी ने आगे ***प्रकाश (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम जी.आराध्या (18 अगस्त, 2023 को निर्णय लिया गया, 2015 की सिविल अपील संख्या 706),*** के मामले में माननीय सर्वोच्च के निर्णय का यह प्रस्तुत करते हुए उल्लेख किया कि उक्त मामले के तथ्य प्रतिवादी के मामले को पूरी तरह से आच्छादित करते हैं और आगे प्रस्तुत किया कि लगभग इसी तरह की परिस्थितियों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपना निष्कर्ष दर्ज किया कि बिक्री विलेख की सामग्री के अवलोकन से पता चलता है कि यह विक्रेता द्वारा घरेलू खर्च और अपने नाबालिग बेटे की शिक्षा के खर्चों को पूरा करने और कुछ ऋणों का भुगतान करने के लिए आवश्यक 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) के कुल बिक्री प्रतिफल के लिए एक पूर्ण

बिक्री थी। कुल बिक्री पर प्रतिफल 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) था। इस राशि में से 3,000/- रुपये की राशि पहले प्राप्त की गई थी और 2,000/- रुपये बिक्री विलेख के पंजीकरण के समय उप-पंजीयक की उपस्थिति में प्राप्त किए जाने थे। बिक्री विलेख के पंजीकरण पर संपत्ति का कब्जा दिया जाना था। विक्रेता अपने नाम में उत्परिवर्तन दर्ज कराने और करों, यदि कोई हो, का भुगतान करके संपत्ति का आनंद लेने का हकदार था। श्री त्रिवेदी ने आगे कहा कि इसी तरह, वर्तमान मामले में, प्रतिवादी ने 3,200/- रुपये पहले प्रदर्श-जी द्वारा का भुगतान किया और बाद में, उक्त राशि को प्रदर्श-सी निष्पादित होने पर समायोजित किया गया था। विक्रेता को भूमि को अपने पक्ष में उत्परिवर्तन कराने और करों का भुगतान करने के बाद संपत्ति का आनंद लेने की अनुमति दी गई थी। इसलिए, इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रदर्श-सी पुनर्खरीद के अधिकार के साथ एक बिक्री विलेख था और यह सशर्त बिक्री द्वारा बंधक विलेख या पांच साल के लिए बंधक विलेख नहीं था जैसा कि श्री चौबे ने दावा किया था।

18. श्री त्रिवेदी ने अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा उद्धृत अधिकारियों को अलग किया। ***वंचलाबाई रघुनाथ इथापे (उपरोक्त)*** के मामले में अपीलार्थियों की ओर से उद्धृत निर्णय के पैरा-11, 13, 17 और 18 का उल्लेख करते हुए, श्री त्रिवेदी ने प्रस्तुत किया कि नामकरण महत्वपूर्ण नहीं था और पाठ देखा जाना था। श्री त्रिवेदी ने ***श्रीनिवासैया (उपरोक्त)*** के मामले में निर्णय के पैरा-7 और 23 का उल्लेख करते हुए, कहा कि यह वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है और बल्कि अपीलार्थियों के मामले के खिलाफ है। ***पटेल रविभाई भुलाभाई (मृत) विधिक प्रतिनिधि द्वारा (उपरोक्त),*** के मामले में निर्णय के पैरा-12 का उल्लेख करते हुए, श्री त्रिवेदी ने प्रस्तुत किया कि इरादा संपत्ति को हस्तांतरित करना था न कि ऋण या बंधक करना, क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक दस्तावेज़ को पूरी तरह से/उसके सम्पूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए। जब किसी दस्तावेज़ के चरित्र पर

सवाल उठाया जाता है, हालाँकि उसका शीर्षक निर्णायक नहीं होता है, तो यह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पक्षकारों का इरादा दस्तावेज़ से ही एकत्र किया जाना चाहिए, लेकिन उसके बाद उसमें भाग लेने वाली परिस्थितियाँ भी प्रासंगिक होंगी; विशेष रूप से जब पक्षों के बीच संबंध सवाल में हो। उक्त उद्देश्य के लिए, यह आवश्यक है कि विलेख के सभी भागों को पूरी तरह से/उसके सम्पूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए। इस प्रकार, श्री त्रिवेदी ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ताओं द्वारा उद्धृत अधिकारियों का अपीलकर्ताओं के उद्देश्य के लिए कोई मदद नहीं है।

19. श्री त्रिवेदी ने इसके बाद कहा कि विद्वत विचारण न्यायालय ने मौखिक साक्ष्य पर भी विचार किया और विद्वत विचारण न्यायालय के निर्णय को इस आधार पर दोष नहीं दिया जा सकता है। दूसरी ओर, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय को पक्षकारों के मौखिक साक्ष्य पर कोई निष्कर्ष देने की आवश्यकता नहीं थी। क्योंकि यह उसके सामने शायद ही कोई मुद्दा था और इसके अलावा, अपील की रखरखाव भी प्रश्नगत था। चूँकि विद्वत विचारण न्यायालय पहले ही मौखिक साक्ष्य पर विचार कर चुका है और विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय ने प्रदर्श-सी की प्रकृति के बारे में निर्धारण के लिए बिंदु तैयार किया है, इसलिए विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय को मौखिक साक्ष्य पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि यह पक्षकारों के बीच वास्तविक विवाद के निर्धारण के उद्देश्य से महत्वपूर्ण नहीं था। श्री त्रिवेदी ने आगे कहा कि प्रतिवादी ने अपने ऊपर डाले गए बोझ का पर्याप्त रूप से निर्वहन किया और 28.02.1958 को डाक प्रमाण पत्र के तहत प्रदर्श-ई के माध्यम से वादी को पुनर्खरीद के लिए नोटिस भेजकर, प्रतिवादी की आगे कोई जिम्मेदारी नहीं थी, क्योंकि विक्रेता, बीबी अकीकुल निसा पर संपत्ति को पुनर्खरीद करने के लिए आगे आना अनिवार्य था, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया और यहां तक कि उसके उत्तराधिकारियों/कानूनी प्रतिनिधियों ने भी वर्ष 1975 में रुपये 7337/- मात्र की राशि देने/जमा करने के लिए आगे बढ़े और

इससे यह भी पता चलता है कि वे जानते थे कि लेन-देन पुनर्खरीद की शर्त के साथ एकमुश्त बिक्री थी और यह कभी भी बिक्री की शर्त के साथ बंधक नहीं था।

20. इस प्रकार, श्री त्रिवेदी ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान दूसरी अपील में कोई योग्यता नहीं है, जो दो अधीनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों के खिलाफ दायर की गई है और उन्हें लागत के साथ खारिज किया जाना चाहिए।

अपीलार्थियों की ओर से दिया गया उत्तरः

21. जवाब के माध्यम से, विद्वान वरिष्ठ वकील, श्री चौबे ने आगे ***विधिक प्रतिनिधि रामलू और अन्य द्वारा गणपति बाबजी आलमवार (मृत) बनाम दिगंबराव वेंकटराव भडके और अन्य (12.09.2019 को, सिविल अपील संख्या(ओं) 2011 का 3960 पर निर्णय लिया गया),*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया और उक्त निर्णय के पैराग्राफ-3, 11 और 12 को उल्लेख करते हुए, श्री चौबे ने प्रस्तुत किया कि उक्त निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ***भास्कर वामन जोशी (मृतक) और अन्य बनाम श्रीनारायण रामबिलास अग्रवाल (मृतक) और अन्य, एआईआर 1960 एससी 301*** में रिपोर्ट किए गए, के मामले में निर्णय पर भरोसा किया जिसमें दस्तावेज़ की प्रकृति के निर्धारण के लिए सिद्धांतों को निम्नानुसार समझाया गया थाः

> *"7.....प्रत्येक मामले में प्रश्न लेनदेन के वास्तविक स्वरूप के निर्धारण का है जिसे आसपास की परिस्थितियों के आलोक में देखे गए विलेख के प्रावधानों से पता लगाया जाना है। यदि शब्द स्पष्ट और असंदिग्ध हैं तो उन्हें आसपास की परिस्थितियों के साक्ष्य के आलोक में उनका वास्तविक कानूनी प्रभाव दिया जाना चाहिए। यदि प्रयुक्त भाषा में संदिग्धता है, तो इरादे का पता ऐसे बाह्य साक्ष्य के साथ*

विलेख की सामग्री से लगाया जा सकता है जिसे कानून द्वारा यह दिखाने के लिए प्रस्तुत करने की अनुमति दी जा सकती है कि विलेख की भाषा किस तरह से मौजूदा तथ्यों से संबंधित थी। "

22. श्री चौबे ने इसके बाद डाक प्रमाणपत्र के माध्यम से भेजे गए नोटिस की पर्याप्तता के बिंदु पर ***समित्री देवी और अन्य बनाम सम्पूरन सिंह और अन्य (2011 की सिविल अपील सं. 846, 21.01.2011 में निर्णीत)*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले/निर्णय पर भरोसा किया और उक्त निर्णय के अनुच्छेद-21 और 22 को संदर्भित किया गया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह सब प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा, कि क्या डाक प्रमाणपत्र के तहत भेजे गए नोटिस की सेवा का अनुमान लगाया जाना चाहिए। यह धारणा पंजीकृत डाक द्वारा भेजे जाने वाले पत्रों पर अधिक बल के साथ लागू होगी, फिर भी, जब तथ्य इतने उचित होते हैं, तो डाक प्रमाण पत्र के तहत भेजे गए पत्र के मामले में भी इस तरह की धारणा तैयार होने की उम्मीद है। **समित्री देवी और अन्य (उपर्युक्त)** के मामलेमें निर्णय के पैराग्राफ-21 और 22, इस प्रकार हैं:

"21. जहाँ तक डाक प्रमाणपत्र के तहत भेजे गए नोटिस का संबंध है, ***श्रीमति एल.एम.एस उम्मू सलीमा बनाम बी. बी. गुजराल और अन्य [1981 (3) एस. सी. सी. 317]*** *में, उस मामले के तथ्यों पर इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने, यह स्वीकार करने से इनकार कर दिया कि विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधि अधिनियम, 1974 के तहत निरुद्ध व्यक्ति द्वारा डाक प्रमाण पत्र के तहत सीमा शुल्क के सहायक कलेक्टर को भेजे गए नोटिस, उनके मूल बयान को वापस लेते हुए संबंधित कार्यालय में विधिवत सेवा प्रदान*

की गई।/सौंपा गया था। ऐसा इसलिए था क्योंकि प्रत्यर्थी ने यह दिखाने के लिए अपनी फाइल पेश करके प्रस्तुत करने का खंडन किया कि इस तरह का पत्र उनके कार्यालय में सामान्य रूप से व्यवसाय के दौरान प्राप्त नहीं हुआ था। हालाँकि, उस मामले में निर्धारित प्रस्ताव हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है। इस न्यायालय ने उस निर्णय के पैराग्राफ 6 में निम्नलिखित टिप्पणी कीः

> *"6.....पोस्टिंग के प्रमाण पत्र से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सीमा शुल्क के सहायक कलेक्टर को संबोधित एक पत्र 14 अगस्त, 1980 को प्रेषित किया गया था और नियत समय पर प्राप्तकर्ता तक पहुंच गया था। लेकिन, यह केवल एक अनुमेय धारणा है और एक अपरिहार्य धारणा नहीं है। न तो धारा 16 और न ही साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 अदालत को अनुमान लगाने के लिए मजबूर करती है। अनुमान लगाया जा सकता है या नहीं भी। किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर, न्यायालय अनुमान लगाने से इनकार कर सकता है। दूसरी ओर शुरुआत में अनुमान लगाया जा सकता है लेकिन साक्ष्य पर विचार करने पर अदालत इस अनुमान का खंडन कर सकती है और इस निष्कर्ष पर पहुंच सकती है कि प्राप्तकर्ता को कोई पत्र प्राप्त नहीं हुआ था या जैसा दावा किया गया था वैसा कोई पत्र कभी नहीं भेजा गया था। आखिरकार, अतीत में ऐसे मामले सामने आए हैं, हालांकि दुर्लभ हैं, जहां डाक प्रमाण पत्र और यहां तक कि डाक मुहरों का निर्माण किया गया है। वर्तमान मामले की परिस्थितियों में, जिन*

परिस्थितियों का हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं, हम संतुष्ट हैं कि वापस लेने का ऐसा कोई पत्र/अवलोकन पत्र पोस्ट/प्रेषित नहीं किया गया था जैसा कि बंदी द्वारा दावा किया गया था।

22. इस निर्णय में निर्धारित प्रस्ताव का पालन इस न्यायालय के समक्ष आने वाले दो बाद के मामलों में कंपनी अधिनियम 1956 की धारा 53 (2) के संदर्भ में किया गया है। के तहत डाक द्वारा भेजे गए बोर्ड की बैठक के नोटिस की तामिल का अनुमान लगाने का प्रावधान है। एम. एस. मधुसूदनन बनाम केरल कौमुदी (प्राइवेट) लिमिटेड और अन्य [2004 (9) एस. सी. सी. 204], इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की एक पीठ ने अपने फैसले के पैरा 117 में, श्रीमति एल. एम. एस. उम्मू सलीमा (उपरोक्त) में प्रस्ताव का उल्लेख किया, और उस मामले के तथ्यों में यह अभिनिर्धारित किया कि डाक प्रमाण पत्र द्वारा नोटिस को प्रभावित होने का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, क्योंकि पक्षों के बीच संबंध कड़वे थे, और नियुक्ति का प्रमाण पत्र संदिग्ध था। इसके विपरीत, उसी धारा के तहत बाद के मामले में, वी. एस. कृष्णन बनाम वेस्टफोर्ट हाई-टेक अस्पताल लिमिटेड [2008 (3) एस. सी. सी. 363] के मामले में, दो न्यायाधीशों की एक अन्य पीठ ने एम. एस. मधुसूदनन (उपरोक्त) में के फैसले का उल्लेख किया, और उस मामले के तथ्यों में यह अनुमान लगाया कि डाक प्रमाण पत्र के तहत भेजा गया नोटिस कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 53 (2) के उद्देश्यों के लिए विधिवत रूप से लागू किया गया था, क्योंकि डाकघर की मुहर वाली डाक रसीद सेवा/तामिल को साबित करने के लिए पेश की गई थी। इस प्रकार, यह सब प्रत्येक मामले के तथ्यों पर

निर्भर करेगा कि डाक प्रमाण पत्र के तहत भेजे गए नोटिस की तामिल का अनुमान लगाया जाना चाहिए या नहीं। यह सच है कि जैसा कि प्रिवी काउंसिल ने अपने उपरोक्त निर्दिष्ट/संदर्भित निर्णय में देखा है, यह धारणा उन पत्रों पर अधिक बल के साथ लागू होगी जो पंजीकृत डाक द्वारा भेजे जाते हैं, फिर भी, जब तथ्य इतने उचित होते हैं, तो डाक प्रमाण पत्र के तहत भेजे गए पत्र के मामले में भी ऐसी धारणा तैयार होने की उम्मीद की जाती है।

निष्कर्ष/परिणामः

23. मैंने पक्षों के प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतिकरण पर विचारपूर्वक विचार किया है और अभिलेख के साथ-साथ पक्षों द्वारा उद्धृत अधिकारी का अवलोकन किया है।

24. कानून के प्रासंगिक प्रावधान, अर्थात टी. पी. अधिनियम की धारा 54, 58 (सी) और 60 निम्नानुसार हैंः

*"54. **"विक्रय" की परिभाषा—** "विक्रय" भुगतान की गई या वादा की गई या आंशिक भुगतान और आंशिक वादा की गई कीमत के बदले में एक स्वामित्व का हस्तांतरण है।*

***58.....(ग) सशर्त बिक्री द्वारा बंधक।—**जहाँ बंधककर्ता बंधक रखी गई संपत्ति को दृष्यतः बेचता है -*

इस शर्त पर कि किसी निश्चित तिथि पर बंधक-धन के भुगतान में चूक होने पर बिक्री पूर्ण हो जाएगी, या

इस शर्त पर कि ऐसा भुगतान किए जाने पर बिक्री अमान्य हो जाएगी, या

इस शर्त पर कि ऐसा भुगतान किए जाने पर क्रेता विक्रेता को संपत्ति हस्तांतरित करेगा,

लेन-देन को सशर्त बिक्री द्वारा बंधक कहा जाता है और बंधकग्राही को सशर्त बिक्री द्वारा बंधकग्राही कहा जाता हैः

[बशर्ते कि ऐसा कोई भी लेन-देन बंधक नहीं माना जाएगा, जब तक कि वह शर्त दस्तावेज़ में सन्निहित न हो जो बिक्री को प्रभावित करती है या करने का इरादा रखती है।]

***60. मोचन करने का बंधककर्ता का अधिकार**— में मूलधन के देय हो जाने के बाद किसी भी समय, बंधककर्ता को उचित समय और स्थान पर, बंधक राशि का संदाय या निविदा पर, बंधकदार से यह माँग करने का अधिकार है कि (क) बंधककर्ता को 10 [बंधककर्ता को बंधक-विलेख और बंधक-संपत्ति से संबंधित सभी दस्तावेज का परिदान करे जो बंधकदार के कब्जे में या शक्ति में हैं], (ख) जहां बंधकदार बंधक संपत्ति के कब्जे में है, बंधककर्ता को उसे परिदत्त करे, और (ग) बंधककर्ता के खर्च पर या तो बंधक संपत्ति को उसे या ऐसे तीसरे व्यक्ति को, फिर से हस्तांतरित करने के लिए, जो वह निर्देश दे, या निष्पादित करने के लिए और (जहां बंधक एक पंजीकृत लिखत द्वारा किया गया है) लेखबध्द अभिस्वीकृति कि ऐसा कोई अधिकार, जो बंधककर्ता के उस हित का अल्पीकरण करता है जो बंधकदार को अंतरित किया गया है, निर्वापित हो गया है, रजिस्ट्रीकृत कराएः*

बशर्ते कि इस धारा द्वारा प्रदत्त अधिकार पक्षकारों के कार्य द्वारा या किसी न्यायालय के [डिक्री] द्वारा समाप्त नहीं किया गया है।

इस धारा द्वारा प्रदत्त अधिकार को मोचन का अधिकार कहा जाता है और इसे लागू कराने के मुकदमे को मोचन का मुकदमा कहा जाता है।

इस धारा की किसी भी बात को इस आशय के किसी भी प्रावधान को अमान्य करने वाला नहीं माना जाएगा कि यदि मूल धन के भुगतान के लिए निर्धारित समय बीतने दिया गया है या ऐसा कोई समय निर्धारित नहीं किया गया है, तो बंधकदार ऐसे धन के भुगतान/संदाय या निविदा से पहले उचित सूचना पाने का हकदार होगा।

***बंधक संपत्ति के भाग का मोचन**— इस धारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को, जो केवल बंधक की गई संपत्ति के हिस्से में रुचि रखता है, केवल बंधक पर देय शेष राशि के आनुपातिक हिस्से के भुगतान पर, अपने हिस्से को मोचन कराने का अधिकार नहीं देगी, सिवाय इसके कि [केवल] जहां कोई बंधकदार, या यदि एक से अधिक बंधकदार हैं, तो ऐसे सभी बंधकदारों ने, पूर्ण या आंशिक रूप से भागतः, एक बंधककर्ता का हिस्सा अधिग्रहित किया है।*

25. सशर्त बिक्री द्वारा बंधक और पुनर्खरीद के अधिकार के साथ बिक्री के सवाल ने लंबे समय से अदालतों को परेशान किया है। ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की चार न्यायाधीशों की पीठ ने इस मुद्दे पर विचार

किया था। ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष तथ्यों के अनुसार, वादी का मामला यह था कि 15-4-1930 का लेन-देन एक बंधक था और चूंकि बाद के बंधकदार को पहले के मुकदमे में एक पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया गया था, इसलिए वादी को मोचन का अधिकार था। पहले प्रतिवादी का मामला यह था कि 15-4-1930 का लेन-देन एक बंधक नहीं था, बल्कि पुनर्खरीद के लिए एक प्रावधान के साथ एक एकमुश्त बिक्री था जो निष्फल हो गया क्योंकि निर्दिष्ट समय के भीतर प्रावधान पर कार्य करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था। विद्वत विचारण न्यायाधीश और निचली अपीलीय अदालत दोनों ने माना कि दस्तावेज़ एक बंधक था और इसलिए वादी के दावे का फैसला किया। दूसरी अपील पर उच्च न्यायालय ने इन निष्कर्षों को उलट दिया और माना कि यह एक बिक्री थी। नतीजतन, उच्च न्यायालय ने वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय के निष्कर्ष के खिलाफ, वादी ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

यह निर्णय माननीय न्यायमूर्ति विवियन बोस द्वारा दिया गया था और पैराग्राफ-5, 6, 7, 8 और 18 में चर्चा काफी स्पष्ट हैः

> *"**5**. यह सवाल कि क्या दिया गया लेन-देन सशर्त बिक्री द्वारा बंधक है या पुनर्खरीद की शर्त के साथ एकमुश्त बिक्री है, एक परेशान करने वाला सवाल है जो हमेशा परेशानी और मुकदमेबाजी को जन्म देता है। इस मुद्दे पर कई निर्णय लिए गए हैं और उच्च न्यायालयों में से कुछ ने उनका मिलान और विश्लेषण में बहुत सारे उद्योग खर्च किए हैं। हम सोचते हैं कि यह एक निष्फल कार्य है क्योंकि दो दस्तावेजों को शायद ही कभी समान शब्दों में व्यक्त किया जाता है और जब संबंधित परिस्थितियों पर विचार करना आवश्यक*

होता है तो अभेद्य चर जो इसकी गति में लाते हैं, एक मामले की दूसरे से तुलना करना असंभव बना देते हैं। प्रत्येक को अपने तथ्यों पर निर्णय लेना चाहिए। लेकिन कुछ व्यापक सिद्धांत बने हुए रहते हैं।

6. *पहला यह है कि पक्षकारों का इरादा निर्धारित करने वाला कारक हैः बाल्किशेन दास बनाम लेग [बाल्किशेन दास बनाम लेग, 1899 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 32:(1899-1900) 27 आइए 58]। लेकिन इस वर्ग के मामलों में इसके बारे में कुछ भी विशेष नहीं है और यहाँ, हर दूसरे मामले की तरह जहाँ एक दस्तावेज़ का अर्थ लगाया जाना है, इरादे को, सबसे पहले, दस्तावेज़ से ही एकत्र किया जाना चाहिए। यदि शब्द अभिव्यक्त और स्पष्ट हैं, तो उन्हें प्रभाव दिया जाना चाहिए और जो सोचा गया था या इरादा था, उसकी किसी भी बाहरी जांच को खारिज कर दिया जाता है। ऐसे मामले में वास्तविक सवाल यह नहीं है कि पक्षकारों का क्या इरादा था या उनका क्या मतलब था, बल्कि यह है कि उन्होंने जो शब्द इस्तेमाल किए हैं, उनका कानूनी प्रभाव क्या है। हालाँकि, यदि प्रयुक्त भाषा में अस्पष्टता है, तो आसपास की परिस्थितियों को देखने की अनुमति है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या इरादा था। जैसा कि लॉर्ड क्रैनवर्थ ने एल्डरसन बनाम व्हाइट [एल्डरसन बनाम व्हाइट, (1858) 2 डी/डे जी एंड जे 97 : 44 ई. आर. 924 पृष्ठ 928] : (ई. आर. पृष्ठ 928) में कहा था।*

"... इस विषय पर कानून का नियम सामान्य ज्ञान द्वारा निर्धारित है; कि प्रथम दृष्टया एक पूर्ण हस्तांतरण, जिसमें यह

दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि देनदार और लेनदार का संबंध पक्षों के बीच मौजूद है, एक पूर्ण हस्तांतरण नहीं रह जाता है और केवल इसलिए बंधक बन जाता है क्योंकि विक्रेता निर्धारित करता है कि उसे पुनर्खरीद का अधिकार होगा। ऐसे प्रत्येक मामले में सवाल यह है कि एक निष्पक्ष निर्माण पर उपकरणों का क्या अर्थ है? "

प्रिवी काउंसिल के उनके प्रभुत्त्व ने भगवान सहाय बनाम भगवान दिन [भगवान सहाय बनाम भगवान दिन, 1890 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 3 : (1889-90) 17 आई. ए. 98 पृष्ठ 102] में और झंडा सिंह बनाम वाहिद-उद-दीन [झंडा सिंह बनाम वाहिद-उद-दीन, 1916 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 61 : (1915-16) 43 आई. ए. 284 पृष्ठ 293 : (1917) 5 एलडब्ल्यू 189] में भारत में इस नियम को लागू किया।

7. इसके विपरीत भी अच्छा है और यदि, इसके विपरीत एक उपकरण स्पष्ट रूप से एक बंधक होने का तात्पर्य रखता है, तो इसे कई बाहरी और अप्रासंगिक विचारों के संदर्भ में बिक्री में नहीं बदला जा सकता है। कठिनाई केवल सीमा रेखा के मामलों में उत्पन्न होती है जहां अस्पष्टता होती है। दुर्भाग्य से, वे इस तरह के लेन-देन का बड़ा हिस्सा हैं।

***8.** कई परस्पर विरोधी निर्णयों के कारण पैदा हुए भ्रम के कारण विधायिका ने कदम उठाया और संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 58 (सी) में संशोधन किया। दुर्भाग्य से यह अपनी ट्रेन में अधिकार के एक और संघर्ष को लाया। लेकिन यह बहुत*

कुछ अब स्पष्ट है। यदि बिक्री और पुनर्खरीद के लिए समझौता अलग-अलग दस्तावेजों में सन्निहित है, तो लेन-देन एक बंधक नहीं हो सकता है चाहे दस्तावेज़ समकालीन रूप से निष्पादित किए गए हों या नहीं। लेकिन इसके विपरीत बात सही नहीं है, कहने के लिए/अर्थात्, केवल एक ही दस्तावेज़ होने का मतलब यह नहीं है कि यह एक बंधक होना चाहिए और बिक्री नहीं हो सकती है। यदि पुनर्खरीद की शर्त दस्तावेज़ में सन्निहित है जो बिक्री को प्रभावित करती है या जिसका उद्देश्य बिक्री को प्रभावित करना है, तो यह निर्माण का मामला है जिसका उद्देश्य था। विधायिका ने एक स्पष्ट वर्गीकरण किया है और बंधक की श्रेणी से एक से अधिक दस्तावेजों में सन्निहित लेन-देन को बाहर कर दिया गया है, इसलिए यह मान लेना उचित है कि जो व्यक्ति संशोधन के बाद दो दस्तावेजों का उपयोग नहीं करना चाहते हैं, वे लेनदेन को बिक्री के रूप में नहीं चाहते हैं, जब तक कि वे उस धारणा को स्पष्ट और अभिव्यक्त शब्दों से विस्थापित नहीं करते हैं; और यदि धारा 58 (सी) की शर्तों को पूरा किया जाता है, तो हमारी राय है कि विलेख को बंधक के रूप में माना जाना चाहिए।

18. *विचार की पर्याप्तता और हित की अनुपस्थिति के बारे में उत्तरदाताओं की ओर से दिए गए बिंदु को समझाया जा सकता है। हस्तांतरणकर्ता को संपत्ति का कब्जा लेना था और इस प्रकार वह उपज प्राप्त करेगा और दस्तावेज़ की अवधि से हमें यह स्पष्ट है कि वह इसके लिए जवाबदेह नहीं था। हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि क्षतिपूर्ति खंड (खंड 9) उपखंड (बी) में कहता है कि हस्तांतरणकर्ता के कब्जे में गड़बड़ी होने की स्थिति में निष्पादक, अन्य बातों के अलावा,*

उसे नुकसान के अलावा, विलेख की तारीख से 2 प्रतिशत प्रति माह ब्याज के साथ पूरे प्रतिफल का भुगतान करेंगे और हस्तांतरणकर्ता को लाभ के लिए लेखा देने की आवश्यकता नहीं होगी। यह सच है कि इसे दूसरे तरीके से भी पढ़ा जा सकता है, लेकिन इन बहुत ही कठोर प्रावधानों के साथ-साथ उपखंड (क) में आपराधिक अभियोजन की धमकी पर विचार करते हुए, हम सोचते हैं कि हस्तांतरणकर्ता ने उन दुर्भाग्यपूर्ण देहाती लोगों से अपने शरीर के पाउंड से अधिक की वसूली की थी जिनके साथ वह सौदा कर रहा था और वह लाभ का लेखा देने के लिए सहमत नहीं होताः वास्तव में यह उसका अपना मामला है, क्योंकि वह कहता है कि यह एक पूर्ण बिक्री थी। इन परिस्थितियों में, ऋण और संपत्ति के मूल्य के बीच उचित अंतर रखने की कोई आवश्यकता नहीं होगी जैसा कि आम तौर पर बंधक के मामले में किया जाता है। सब कुछ ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि विलेख संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 58 (सी) के तहत सशर्त बिक्री द्वारा एक बंधक है।

26. ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले में निर्धारित परीक्षण के आधार पर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ***श्रीनिवासैया*** (उपरोक्त) के मामले का फैसला किया, जिसमें विचाराधीन दस्तावेज़ को सशर्त बिक्री के साथ बंधक का दस्तावेज़ माना गया था। अब, ***श्रीनिवासैया*** (उपरोक्त) के मामले में मामले के तथ्य इस प्रकार थेः

*"**3.** अपीलार्थी प्रतिवादी 2 है जबकि प्रतिवादी 1 से 5 मूल वादी के कानूनी प्रतिनिधि हैं और प्रतिवादी 6 से 11 दीवानी मुकदमे में मूल प्रतिवादी 1 के कानूनी प्रतिनिधि हैं जिन दिवानी वाद से ये अपीलें*

उत्पन्न होती हैं। मूल वादी एम. एन. चन्नबसप्पा मुकदमे की भूमि के मालिक थे (शिकायत की अनुसूची में विस्तार से वर्णित)। 1969 में उन्हें धन की आवश्यकता पड़ी। इसलिए, उन्होंने मूल प्रतिवादी 1, बी. एम. नारायण शेट्टी से संपर्क किया और उनसे उस दौरान उनके सामने आने वाले वित्तीय संकट को दूर करने के लिए कुछ धन देने का अनुरोध किया। प्रतिवादी 1 ने सहमति व्यक्त की और तदनुसार वादी को ऋण के रूप में 1500 रुपये दिए। पुनर्भुगतान को सुरक्षित करने के लिए, प्रतिवादी 1 द्वारा किए गए अनुरोध पर वादी ने 28-7-1969 (प्रदर्श पी-1) को प्रतिवादी 1 के पक्ष में एक दस्तावेज़ निष्पादित किया। और उप-पंजीयक, कनकपुरा के साथ इसे पंजीकृत कराया। प्रतिवादी 1 को भी दस्तावेज़ के अनुसार मुकदमे की संपत्ति के कब्जे में रखा गया।

4. 30-6-1987 को, वादी ने प्रतिवादी 1 को एक कानूनी नोटिस भेजा और प्रदर्श पी-1 की शर्तों के संदर्भ में मुकदमे की भूमि को उसके पक्ष में मोचन के लिए एक और अनुरोध के साथ उसे 1500 रुपये पुनः चुकाने की पेशकश की। वादी ने तर्क दिया कि प्रदर्श पी-1 अनिवार्य रूप से प्रतिवादी 1 द्वारा उसे दिए गए ऋण के पुनर्भुगतान के लिए प्रतिभूति के माध्यम से प्रतिवादी 1 के पक्ष में उसके द्वारा निष्पादित एक बंधक विलेख था। वादी ने तर्क दिया कि प्रदर्श पी-1 की शर्तों के संदर्भ में, उन्होंने 5 साल की अवधि के लिए प्रतिवादी 1 को वाद भूमि का कब्जा सौंप दिया ताकि प्रतिवादी 1 को वाद भूमि का फल प्राप्त करने में सक्षम बनाया जा सके और पांच साल के भीतर

1500 रुपये का भुगतान करने पर, बंधक को मोचन कर वाद भूमि के कब्जे को बहाल किया जा सके।

5. प्रतिवादी 1 ने 13-8-1987 को नोटिस का जवाब भेजा। उन्होंने वादी के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और उसमें तर्क दिया कि दस्तावेज़ दिनांकित 28-7-1969 (प्रदर्श पी-1) एक "बंधक विलेख" नहीं है जैसा कि वादी द्वारा नोटिस में वर्णित किया गया है, लेकिन यह वास्तव में वादी द्वारा उसके पक्ष में 1500 रुपये में निष्पादित वाद भूमि के संबंध में एक "बिक्री विलेख" है, जिसके अनुसार प्रतिवादी 1 को भी मालिक के रूप में वाद भूमि के कब्जे में रखा गया था। यह तर्क दिया गया था कि प्रतिवादी 1 ने, इस बीच, विचार के लिए बिक्री विलेख निष्पादित करके याचिका दायर करने वाले को (प्रतिवादी 2) मुकदमे की जमीन बेच दी।

श्रीनिवासैया (उपरोक्त) के मामले में, वादी ने वादी के पक्ष में वाद भूमि के बंधक के मोचन के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर किया, इस घोषणा के अलावा कि वाद भूमि का प्रतिवादी नं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में 25-9-1986 दिनांकित के बिक्री विलेख के माध्यम से की गई बिक्री कानूनी रूप से और प्रतिवादियों से वाद भूमि के कब्जे की वसूली के लिए भी गलत था। विद्वत विचारण न्यायालय ने 30-6-2000 को यह मानते हुए मुकदमे का फैसला सुनाया कि दस्तावेज़ (प्रदर्श पी-1) सशर्त बिक्री द्वारा बंधक है और न कि बिक्री विलेख। पहली अपील को विचारण न्यायालय के फैसले/डिक्री को दरकिनार करते हुए अनुमति दी गई थी जिसमें कहा गया था कि दस्तावेज़ दिनांकित 28-7-1969 (प्रदर्श पी-1) एक बंधक विलेख नहीं था, लेकिन यह एक बिक्री विलेख की प्रकृति में था। इसके बाद,

वादी ने उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील को प्राथमिकता दी, जिसमें महत्वपूर्ण प्रश्नों में से एक यह था कि क्या पहली अपीलीय अदालत द्वारा वाद दस्तावेज के बारे में दी गई व्याख्या, यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि यह सशर्त बिक्री द्वारा बंधक नहीं है, उचित थी। उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील को स्वीकार कर लिया, पहली अपीलीय अदालत के फैसले/डिक्री को दरकिनार कर दिया और विचारण न्यायालय के फैसले/डिक्री को बहाल कर दिया। उच्च न्यायालय ने माना कि दस्तावेज़ (प्रदर्श पी-1) सशर्त बिक्री के माध्यम से एक बंधक था और न कि एकमुस्त बिक्री। माननीय उच्चतम न्यायालय ने विद्वत विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के निर्णय को बरकरार रखते हुए कहा कि दस्तावेज़ (प्रदर्श पी-1) सशर्त बिक्री द्वारा एक बंधक था और न कि एक बिक्री विलेख।

27. इसी तरह का प्रभाव ***पटेल रविभाई भुलाभाई (उपर्युक्त),*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय है। जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा-3, 12, 13 और 14 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

> *"**3.** मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि मूल वादी शेख रहेमानभाई मोहम्मदभाई (जब से उनकी मृत्यु हो गई) और शेख इस्माइलभाई मोहम्मदभाई ने प्रतिवादी 1 और 2, अर्थात् पटेल रविभाई भुलाभाई (जब से उनकी मृत्यु हो गई) और पटेल दह्याभाई भुदरभाई, जिन्हें सशर्त बिक्री का शीर्षक दिया गया था, के पक्ष में 10,000 रुपये की राशि के लिए एक विलेख निष्पादित किया, जिसमें यह प्रावधान था कि यदि पांच साल की अवधि के भीतर पुनर्भुगतान किया जाता है, तो प्रतिवादी आगे की शर्त के साथ वादी को कब्जे में मुकदमे में संपत्ति वापस कर देंगे कि वादी को पाँच साल की अवधि समाप्त होने के बाद*

संपत्ति वापस पाने का कोई अधिकार नहीं होगा। वादियों ने दिनांकित 30-12-1960 विलेख के तहत बंधक राशि के पुनर्भुगतान पर विचाराधीन संपत्ति (यानी रुस्तमपुरा गांव, तालुका थासरा में स्थित 3 एकड़ 29 गुंटा मापन के लिए सर्वेक्षण संख्या 148) के मोचन के लिए सिविल जज, जूनियर डिवीजन, डाकोर के समक्ष 1984 का दीवानी मुकदमा संख्या 156 स्थापित किया, और आगे कुल लाभ (मध्यवर्ती लाभ) के साथ संपत्ति के कब्जे पुनः प्राप्त करने की मांग की। वादियों ने दलील दी कि विचाराधीन विलेख एक बंधक विलेख था, और इस तरह उन्हें उसी को मोचन का अधिकार है।

12. *सी. चेरियाथन बनाम पी. नारायणन एम्ब्रान्थिरी [सी. चेरियाथन बनाम पी. नारायणन एम्ब्रान्थिरी, (2009) 2 एससीसी 673:(2009) 1 एस. सी. सी. (दिवानी) 692], किसी दस्तावेज़ की व्याख्या से संबंधित सिद्धांत पर चर्चा की गई कि क्या बिक्री सशर्त बिक्री द्वारा बंधक है या फिर से खरीदने की शर्त के साथ बिक्री है, और इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दियाः (एस. सी. सी पृष्ठ 677, पैरा 12)*

"12. जैसा कि सर्वविदित है, एक दस्तावेज़ को उसके सम्पूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए। जब किसी दस्तावेज़ के चरित्र पर सवाल उठाया जाता है, हालांकि उसका शीर्षक निर्णायक नहीं होगा, तो यह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पक्षकारों का इरादा दस्तावेज़ से ही एकत्र किया जाना चाहिए, लेकिन इसके लिए उसमें भाग लेने वाली परिस्थितियाँ भी प्रासंगिक होंगी; विशेष रूप से जब पक्षों के बीच संबंध

सवाल में हो। उक्त उद्देश्य के लिए, यह आवश्यक है कि विलेख के सभी भागों को उसके सम्पूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए।"

13. *हाथ में दिए गए मामले में विचाराधीन दस्तावेज़ (प्रदर्श 23) में निम्नलिखित शर्त शामिल हैः*

"इस विलेख की शर्त यह है कि 10,000.00 रुपये की उक्त राशि, जब हम आज से पांच साल के भीतर आपको वापस कर देंगे, तो आप हमें उक्त संपत्ति कब्जे के साथ वापस कर देंगे। और इसी तरह, हमें समय-सीमा समाप्त होने के बाद वापस मांगने का कोई अधिकार नहीं होगा। "

14. *प्रदर्श 23 में उपरोक्त स्थिति यह है कि यदि वादी (प्रतिवादी) पाँच वर्ष की अवधि के भीतर 10,000 रुपये का पुनर्भुगतान करते हैं, तो प्रतिवादी वाद में संपत्ति का कब्जा वादी को वापस सौंप देंगे, यह दर्शाता है कि पक्षों के बीच वास्तविक लेनदेन ऋण का था, और देनदार और लेनदार का संबंध मौजूद था, इस प्रकार, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि विचाराधीन विलेख, प्रदर्श 37 के साथ पठित प्रदर्श 23 सशर्त बिक्री के माध्यम से एक बंधक है और वादी के पक्ष में पारित डिक्री में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है। कहने की जरूरत नहीं है, क्योंकि भूमि का कब्जा बंधकदार को सौंप दिया गया था, कोई ब्याज नहीं लिया गया था। यह भी अभिलेख में आया है कि 1960 में वादी द्वारा कब्जा दिए जाने के बाद प्रतिवादियों ने भूमि को तीसरे पक्ष को पट्टे पर दिया था। इन परिस्थितियों में, अभिलेख पर साक्ष्य के*

अवलोकन के बाद, हम उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से सहमत हैं।"

28. इसके अलावा, ***गणपति बाबजी आलमवार (मृत) विधिक प्रतिनिधि रामलू और अन्य द्वारा*** के मामले में निर्णय के पैराग्राफ-3, 11 और 12 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में आयोजित किए गएः

"3. दीवानी न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि दस्तावेज़ की प्रकृति के साथ-साथ उसमें पाठ और वादी के आचरण ने उसे इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ा कि दस्तावेज़ एक बिक्री विलेख था। प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय ने दस्तावेज़ की व्याख्या पर इसे सशर्त बिक्री द्वारा बंधक माना, यह मानते हुए कि उनका अस्तित्व एक देनदार और एक लेनदार का संबंध है, न कि एक अंतरणकर्ता या अंतरिती का। इस प्रकार, वर्तमान अपील।

11. भास्कर वामन जोशी (मृतक) और अन्य बनाम श्रीनारायण रामबिलास अग्रवाल (मृतक) और अन्य, ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 301, दस्तावेज़ की प्रकृति के निर्धारण के लिए सिद्धांतों को निम्नानुसार समझाया गया थाः- "7... प्रत्येक मामले में प्रश्न लेनदेन के वास्तविक स्वरूप के निर्धारण का है जिसे आसपास की परिस्थितियों के आलोक में देखे गए विलेख के प्रावधानों से पता लगाया जाना है। यदि शब्द स्पष्ट और असंदिग्ध हैं तो उन्हें आसपास की परिस्थितियों के साक्ष्य के आलोक में उनका वास्तविक कानूनी प्रभाव दिया जाना चाहिए। यदि प्रयुक्त भाषा में अस्पष्टता है, तो इरादे का पता ऐसे बाह्य साक्ष्य के साथ विलेख की सामग्री से लगाया जा

सकता है, जिसे कानून द्वारा यह दिखाने के लिए प्रस्तुत करने की अनुमति दी जा सकती है कि विलेख की भाषा किस तरह से मौजूदा तथ्यों से संबंधित थी।" 1

12. उपरोक्त चर्चा और वर्तमान मामले के तथ्यों के आलोक में, दस्तावेज़ के शीर्षक सहित 29.04.1971 दिनांकित समझौते में पाठों की समग्र रूप से जांच करने पर, हमें कोई संदेह नहीं है कि यह पुनर्खरीद के विकल्प के साथ एक बिक्री विलेख नहीं था, बल्कि सशर्त बिक्री द्वारा बंधक का एक दस्तावेज था। एक कृषक आम तौर पर अपनी कृषि भूमि, जो उसके अस्तित्व और आजीविका का स्रोत है, को केवल उसके द्वारा ऋण पर की गई खरीद के लिए इतनी आसानी से नहीं देगा। वादियों की विकट वित्तीय स्थिति इस तथ्य से स्पष्ट है कि उनके पास दैनिक आवश्यकताओं की ऋण खरीद के लिए अपनी ढाई एकड़ कृषि भूमि को बंधक रखने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था। वादी की वित्तीय कठोरता किश्त बांड के निष्पादन के बाद भी कुछ भी चुकाने में उनकी विफलता से स्पष्ट है। अपनी खराब वित्तीय स्थिति के कारण वादी की सीमाओं को देखते हुए, यह तथ्य कि उन्होंने तीन साल बाद इस प्रकार किए गए उत्परिवर्तन पर आपत्ति नहीं जताई हो सकता है, 29.04.1971 दिनांकित समझौते की विपरीत व्याख्या के लिए पर्याप्त नहीं माना जा सकता है, विशेष रूप से जब अपीलीय न्यायालय ने माना कि वादी भूमि के कब्जे में थे। मामले के तथ्यों में, एक देनदार और लेनदार संबंध स्पष्ट रूप से स्थापित है और शायद ही आगे स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। परिसीमा अधिनियम 1963 के अनुच्छेद 61 (क) के तहत मोचन के अधिकार की सीमा 30

वर्ष है। इसलिए मोचन का मुकदमा परिसीमा के अधीन था। वर्तमान मामले के तथ्यों में, हम मुकदमा दायर करने में सात साल की देरी को इतना घातक नहीं मानते हैं, कि वादी को उसकी कृषि भूमि से बेदखल कर दिया जाए।"

29. दूसरी ओर, ***भोजू मंडल*** (उपरोक्त) के मामले में प्रतिवादियों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा उद्धृत प्राधिकरण, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त मामले के तथ्यों को ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) और पैराग्राफ़-2 और 7 के मामले से अलग किया है, प्रासंगिक हैं जो नीचे दिए गए अनुसार हैंः

*"**2.** जिन तथ्यों ने इस अपील को जन्म दिया, उन्हें संक्षेप में कहा जा सकता हैः 2 फरवरी, 1924 को, अपीलकर्ता 1 और 2, उनके पिता स्वर्गीय मातूकी मंडल और उनके चाचा स्वर्गीय लीला मंडल ने 2800 रुपये के प्रतिफल के लिए उत्तरदाता 1 और 2 के पक्ष में 12.6 एकड़ की संपत्ति हस्तांतरण के लिए अभिप्रेत/तात्पर्यित एक विलेख निष्पादित किया और उन्हें उसी के कब्जे में रखा। 1950 में अपीलकर्ताओं ने इस आधार पर मोचन के लिए मुंसिफ, प्रथम न्यायालय, भागलपुर, बिहार के न्यायालय में 1950 का स्वामित्व मुकदमा संख्या 73 मोचन के लिए इस आधार पर स्थापित किया कि उक्त दस्तावेज सशर्त बिक्री द्वारा बंधक था। प्रतिद्वंद्वी प्रतिवादियों यानी उत्तरदाता 1 और 2 ने तर्क दिया कि उक्त दस्तावेज़ एक बंधक नहीं था, बल्कि एक पूर्ण रूप से बिक्री थी और इसलिए मोचन के लिए मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं था। मुंसिफ और अपील पर अधीनस्थ न्यायाधीश, भागलपुर ने अपीलार्थी के तर्क को स्वीकार कर लिया और*

मुकदमे का फैसला सुनाया, लेकिन दूसरी अपील पर उच्च न्यायालय ने माना कि दस्तावेज़ एक बिक्री थी और उस निष्कर्ष पर अपील की अनुमति दी गई थी और मुकदमे को पूरे खर्च के साथ खारिज कर दिया गया था। अपीलकर्ताओं ने विशेष अनुमति से उच्च न्यायालय के आदेश और फैसले के खिलाफ वर्तमान अपील को प्राथमिकता दी।

7. *अपीलार्थी के विद्वान वकील ने 'पंडित चुनचुन झा बनाम शेख इबादत अली [(1955) 1 एस. सी. आर. 174] में अदालत के इस फैसले पर भरोसा रखा है। शुरुआत में यह कहा जा सकता है कि एक दस्तावेज़ के तहत पक्षों के इरादे का पता लगाने के लिए दूसरे दस्तावेज़ की शर्तों के निर्माण पर निर्णय आमतौर पर कोई मार्गदर्शन नहीं दे सकता है जब तक कि शर्तें एक दूसरे के समान न हों। यह सच है कि उस मामले में दस्तावेज़ की कुछ शर्तों को वर्तमान दस्तावेज़ की कुछ शर्तों के लिए अनुमानित किया जा सकता है, लेकिन इस न्यायालय का उक्त निर्णय वास्तव में एक महत्वपूर्ण परिस्थिति में बदल गया। उस मामले में दस्तावेज़ में एक महत्वपूर्ण पाठ पाया जाता है जो विचाराधीन दस्तावेज़ में दिखाई नहीं देता है और यहाँ एक और महत्वपूर्ण पाठ पाया जाता है जो वहाँ मौजूद नहीं है। वहाँ जांच के तहत दस्तावेज़ को 15 अप्रैल, 1930 को निष्पादित किया गया था। दस्तावेज़ के निष्पादन से पहले निष्पादकों ने बिहार किरायेदारी अधिनियम की धारा 40 के तहत परिवर्तन की कार्यवाही शुरू की। वे कार्यवाही 18 फरवरी, 1931 तक यानी विलेख के बाद लगभग दस महीने तक जारी रही। निष्पादकों ने दस्तावेज़ को निष्पादित करने के बाद भी परिवर्तन की कार्यवाही को जारी रखने में सक्षम बनाने के लिए*

65/6 रुपये उधार लिए। बोस, जे. अदालत के लिए बोलते हुए, उक्त परिस्थिति का उल्लेख करते हुए पृष्ठ 183 पर अवलोकन किया: "हम समझते हैं कि यह महत्वपूर्ण है। जो लोग अपनी संपत्ति बेच रहे हैं, वे राजस्व कार्यवाही जारी रखने के लिए शायद ही पैसे उधार लेने की परेशानी उठाएंगे, जिससे उन्हें अब कोई लाभ नहीं हो सकता है और वे केवल अपने हस्तांतरणकर्ताओं की भलाई के लिए आश्वस्त हो सकते हैं। इसलिए, यह स्पष्ट है कि इस परिस्थिति ने मामले को निष्पादकों के पक्ष में कर दिया। वर्तमान मामले में महत्वपूर्ण परिस्थिति, अर्थात्, उस मामले में यह मौजूद नहीं थी कि एक छोटी राशि के लिए एक बड़ी भूभाग के पहले के बंधक के निर्वहन में एक छोटी भूभाग को अधिक राशि के लिए बेचा गया था। उक्त महत्वपूर्ण परिस्थितियाँ दोनों मामलों को पूरी तरह से भिन्न बनाती हैं और इसलिए इस अदालत का उक्त निर्णय विचाराधीन दस्तावेज़ को समझने में कोई मदद नहीं करता है। परिस्थितियों के संदर्भ में दस्तावेज़ की शर्तों के संचयी प्रभाव पर विचार करने पर हम मानते हैं कि विचाराधीन दस्तावेज़ एक बंधक नहीं है, बल्कि पुनः खरीद की शर्त के साथ एक बिक्री है। उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया निष्कर्ष सही है।" आसपास की परिस्थितियों में हम मानते हैं कि विचाराधीन दस्तावेज़ एक बंधक नहीं है, बल्कि पुनः खरीद की शर्त के साथ एक बिक्री है। उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया निष्कर्ष सही है।"

30. इसके अलावा, ***वंचलाबाई रघुनाथ इथापे (उपरोक्त)*** के मामले में निर्णय के अनुच्छेद 11,13,17 और 18 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

*"**11.** विचाराधीन दस्तावेज़ को बिक्री विलेख के रूप में वर्णित किया गया है जिसमें उपकरणों और कब्जे के साथ भूमि को प्रतिवादी को हस्तांतरित किया गया था। बिक्री विलेख का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया हैः*

"इस प्रकार बिक्री भूमि के साथ-साथ उपकरणों और सभी अधिकार आपको उसके कब्जे के साथ सभी अधिकारों के साथ बेचे जा रहे हैं। इस प्रकार आप उसी की खेती कर सकते हैं। अब से मेरा या मेरे उत्तराधिकारियों का इस पर कोई अधिकार नहीं होगा और आप उक्त भूमि के स्वामी बन गए हैं। किसी भी तरह की बाधा को मेरी कीमत पर दूर किया जाएगा। मुझे उसी के लिए प्रतिफल प्राप्त हुआ है जिसके लिए कोई शिकायत नहीं है। यदि उस समय किसी भी फाल्गुन महीने के अंत में 5 वर्षों के भीतर 3000 रुपये का भुगतान किया जाता है, तो आपको उक्त राशि स्वीकार करनी चाहिए और मुझे भूमि वापस करनी चाहिए और इस शर्त पर यह जमीन आपको बेची जा रही है।.

***13.** उपर्युक्त प्रावधानों, विशेष रूप से धारा 58 (सी) के अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि "सशर्त बिक्री द्वारा बंधक" के अर्थ के भीतर एक लेनदेन लाने के उद्देश्य से, पहली शर्त यह है कि बंधककर्ता स्पष्ट रूप से बंधक संपत्ति को इस शर्त पर बेचता है कि ऐसा भुगतान किए जाने पर, खरीदार संपत्ति को विक्रेता को हस्तांतरित कर देगा। यद्यपि एक धारणा है कि लेन-देन उन मामलों में सशर्त बिक्री द्वारा एक बंधक है जहां पूरा लेनदेन एक दस्तावेज़ में है, लेकिन केवल एक ही दस्तावेज़ में शामिल एक शब्द के कारण यह हमेशा स्वीकार नहीं*

किया जा सकता है कि पक्षों के बीच सहमत लेनदेन एक बंधक लेनदेन था।

17. *तम्बोली में रमनलाल मोतीलाल बनाम घांची चिमनलाल केशवलाल [1993 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 295 : ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1236] में, मामले के तथ्य इस मामले के समान थे। उस मामले में, हस्तांतरण का एक दस्तावेज निष्पादित किया गया था और संपत्ति को सौंप दिया गया था। साथ ही, दस्तावेज़ में कहा गया है कि संपत्ति को पांच साल की अवधि के लिए सशर्त रूप से बेचा जाता है और कब्जा सौंप दिया जाता है। दस्तावेज़ में कहा गया हैः "इसलिए, आप और आपके उत्तराधिकारी और कानूनी प्रतिनिधि अब स्वामित्व अधिकार के तहत उक्त घरों का उपयोग करने, आनंद लेने और पट्टे पर देने के हकदार हैं।" दस्तावेज़ में आगे का खंड यह था कि निष्पादक पाँच साल की अवधि के भीतर राशि का पुनः भुगतान करेगा और यदि वह पुनः भुगतान करने में विफल रहता है तो न तो उसे और न ही उसके उत्तराधिकारियों को और न ही कानूनी प्रतिनिधियों को उक्त संपत्तियों को वापस लेने का कोई अधिकार होगा। अंतिम महत्वपूर्ण खंड यह था कि पाँच साल की अवधि के बाद हस्तांतरणकर्ता को अपने नाम पर नगरपालिका रिकॉर्ड को उत्परिवर्तित कराने और कर का भुगतान करने का अधिकार होगा। इन तथ्यों पर, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः एस. सी. सी. (पृष्ठ 298-99, पैरा 16-17)*

"16. संबंधित विवादों की सराहना करने के लिए, हमारे लिए दिनांकित 11-12-1950 प्रदर्श 26 का विश्लेषण करना आवश्यक है। इससे पहले, चेतावनी का एक शब्द कहना आवश्यक है। सशर्त बिक्री द्वारा बंधक और पुनर्खरीद के विकल्प के साथ बिक्री के बीच अच्छे अंतर को ध्यान में रखते हुए, किसी को मामले के कानून से अधिक मदद के बिना अकेले दस्तावेज़ की शर्तों द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए। बेशक, मामलों को इरादे को इकट्ठा करने के लिए एक विशेष खंड की व्याख्या करने के उद्देश्यों के लिए भेजा जा सकता है। फिर, यह भी तय किया गया कानून है कि दस्तावेज़ का नामकरण शायद ही निर्णायक है और केवल नामकरण के साथ बहुत महत्व नहीं जोड़ा जा सकता है क्योंकि यह वास्तविक इरादा है जिसे इकट्ठा करने की आवश्यकता है। इसी दृष्टिकोण से हम दस्तावेज़ का विश्लेषण करने का प्रस्ताव करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि दस्तावेज़ को सशर्त बिक्री के विलेख के रूप में शैलीबद्ध किया गया है, लेकिन जैसा कि हमने अभी देखा है, यह मामले का निर्णायक नहीं है।

17. निष्पादक दस्तावेज़ के तहत क्या करता है? वह नकद में 5000 रुपये लेता है। विवरण इस प्रकार हैं (क) 2499 रुपये अर्थात 899 रुपये उसके घर को 27-1-1944 को बंधक रखने के लिए और (ख) 1600 रुपये अतिरिक्त बंधक रखने के लिए 31-5-1947 को कुल 2499 रुपये। इसके बाद हस्तांतरणकर्ता से 2501 रुपये नकद लिए गए। इसका उद्देश्य विविध ऋणों और घरेलू खर्चों और व्यवसाय को चुकाना था। यह ध्यान रखना होगा कि 5000 रुपये की इस राशि को ऋण के रूप में बिल्कुल नहीं लिया गया था। जैसा कि उच्च न्यायालय

द्वारा उचित रूप से देखा गया है, इस दस्तावेज़ को निष्पादित करके निष्पादक सभी पूर्व ऋणों और बकाया का निर्वहन करता है। जहाँ, इसलिए, सशर्त बिक्री 5000 रुपये की राशि के प्रतिफल के साथ किया जाता है, हम यह देखने में असमर्थ हैं कि देनदार और लेनदार के संबंध को कैसे बनाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, समग्र रूप से दस्तावेजों को पढ़कर, हम यह निष्कर्ष निकालने में असमर्थ हैं कि ऋण है और पक्षों के बीच संबंध देनदार और लेनदार का है। लेन-देन की प्रकृति को निर्धारित करने के लिए यह एक महत्वपूर्ण बिंदु है।"

इसलिए, इस न्यायालय ने माना कि दस्तावेज़ सशर्त बिक्री द्वारा बंधक नहीं था, बल्कि दस्तावेज़ को फिर से खरीदने की शर्त के साथ बिक्री के माध्यम से हस्तांतरण किया गया था।

18. *तत्काल मामले में, कथित बिक्री दस्तावेज को वर्ष 1967 में निष्पादित किया गया था, जिसमें एक शर्त/शर्त के अधीन बिक्री के माध्यम से सूट संपत्ति का हस्तांतरण किया गया था कि पांच साल के भीतर 3000 रुपये की बिक्री राशि प्राप्त करने पर भूमि को वादी विक्रेता को वापस कर दिया जाना था। यह भी विवाद में नहीं है कि भूमि के हस्तांतरण के बाद उत्तरदाता-1 प्रतिवादी कब्जा में आया और एक पूर्ण मालिक के रूप में मुकदमे की संपत्ति का उपयोग किया और उसका आनंद लिया। 11 वर्षों के बाद ही अपीलार्थी-वादी ने यह आरोप लगाते हुए मुकदमा दायर किया कि मुकदमे की संपत्ति प्रतिवादी-उत्तरदाता 1 के पक्ष में भूमि के पुनःहस्तातंरण की शर्त के साथ बंधक रखी गई थी।"*

31. तथ्यों की समानता के आधार पर, श्री त्रिवेदी ने ***प्रकाश (मृत) विधिक प्रतिनिधि द्वारा (उपरोक्त),*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया, पैराग्राफ-19, 21, 25 और 29 जिसे नीचे पढ़ा जा सकता हैः

> ***19.*** *विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री के खिलाफ अपीलार्थी द्वारा दायर अपील में, उच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित दो प्रश्न तैयार किए गए थे: "1. क्या विचारण न्यायालय द्वारा दिनांकित 20.12.1973 [24.12.1973 को पंजीकृत] दस्तावेज को विक्रय विलेख के रूप में अभिनिर्धारित करना और इसके परिणामस्वरूप वादी के इस दावे को अस्वीकार करना उचित था कि उक्त विक्रय विलेख को यदि दिनांकित 24.12.1973 पुनर्खरीद के समझौते के साथ पढ़ा जाए तो यह श्रीमती रुद्रम्मा के पक्ष में वाद अनुसूची संपत्ति का बंधक नहीं होगा? 2. क्या विचारण न्यायालय ने मुकदमे को यह मानते हुए खारिज करने में उचित था कि दिनांकित 20.12.1973 [24.12.1973 को पंजीकृत] दस्तावेजों को पूर्ण बिक्री विलेख के रूप में माना गया था और इसके परिणामस्वरूप बंधक के मोचन के लिए वादी की प्रार्थना को खारिज कर दिया गया था? "*
>
> ***21.*** *उच्च न्यायालय द्वारा तैयार किए गए उपरोक्त प्रश्नों के अवलोकन से पता चलता है कि ये सह-संबंधित हैं। मुख्य मुद्दा यह था कि क्या पक्षों के बीच लेन-देन संपत्ति की पूर्ण बिक्री थी या यह एक बंधक था। बिक्री विलेख की चुनौती के संदर्भ में परिसीमा का मुद्दा, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के खिलाफ तय किया गया था, उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था, जैसा कि तैयार*

किए गए प्रश्नों से स्पष्ट है। इसलिए, इस पहलू को इस न्यायालय के समक्ष संबोधित नहीं किया जा सका।

25. *इसी तरह का तर्क, जिसमें दो अलग-अलग दस्तावेजों को निष्पादित किया गया था, विश्वनाथ प्रसाद सिंह के मामले (उपरोक्त) में इस अदालत के समक्ष विचार के लिए आया। एक बिक्री विलेख था और दूसरा बिक्री के लिए समझौता था। दोनों एक ही तारीख को निष्पादित की गई थी। इसमें यह राय दी गई थी कि किसी दस्तावेज़ की सराहना करने के लिए उसकी सामग्री को पूरी तरह से पढ़ा जाना चाहिए और पक्षकारों का इरादा उसमें उपयोग की जाने वाली भाषा से एकत्र किया जाना चाहिए। उपरोक्त निर्णय के पैरा 16 को तत्काल संदर्भ के लिए संदर्भित किया गया हैः*

16. एक विलेख जैसा कि सर्वविदित है, का अर्थ इसमें प्रयोग की गई भाषा को ध्यान में रखते हुए लगाया जाना चाहिए। हम यहाँ पहले भी देख चुके हैं कि बिक्री के उक्त विलेख के कारण, यहाँ उत्तरदाताओं के अधिकार, स्वामित्व और हित को अपीलार्थी के पक्ष में पूरी तरह से हस्तांतरित किया गया था। बिक्री विलेख में अपीलार्थी द्वारा उत्तरदाताओं को किसी भी राशि के अग्रिम के किसी अन्य लेन-देन का उल्लेख नहीं किया गया है जो पक्षों द्वारा और उनके बीच किया गया था। वास्तव में, बिक्री विलेख में किए गए पाठ स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि उत्तरदाताओं ने अपीलार्थी को संपत्ति से हस्तांतरित करने का अपना इरादा व्यक्त किया क्योंकि उन्होंने विभिन्न अन्य लेनदारों से ऋण लेकर ऋण लिया था।" 25.1. इसके अलावा, उपरोक्त निर्णय में, इस

न्यायालय ने बिक्री विलेख के साथ निष्पादित समझौते की शर्तों की व्याख्या करते हुए कहा कि इन्हें बंधक नहीं माना जा सकता क्योंकि इसमें उपयोग की गई अभिव्यक्ति 'विक्रेता', 'क्रेता', 'बेचा गया' और 'प्रतिफल' थी। बिक्री विलेख के निष्पादन के लिए निश्चित अवधि दी गई थी।

29. *बिक्री विलेख की सामग्री के अवलोकन से पता चलता है कि इसमें यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि यह विक्रेता द्वारा घरेलू खर्चों को पूरा करने और अपने नाबालिग बेटे के शिक्षा खर्चों को पूरा करने और कुछ ऋणों को चुकाने के लिए आवश्यक 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) की कुल बिक्री प्रतिफल के लिए एक पूर्ण बिक्री थी। कुल बिक्री प्रतिफल 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) था। इस राशि में से 3,000/- रुपये (तीन हजार रुपये) की राशि पहले प्राप्त की गई थी और 2,000/- रुपये (दो हजार रुपये) बिक्री विलेख के पंजीकरण के समय उप-पंजीयक की उपस्थिति में प्राप्त किए जाने थे। संपत्ति का कब्जा बिक्री विलेख के पंजीकरण पर दिया जाना था। विक्रेता अपने नाम में उत्परिवर्तन दर्ज कराने और करों का भुगतान करके संपत्ति, यदि कोई हो, का लाभ उठाने का हकदार था। वह पीढ़ी दर पीढ़ी इसकी पूर्ण स्वामी बनेंगी। संपत्ति से जुड़ी कोई बाधाएं नहीं थीं।*

32. पक्षों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकीलों द्वारा संदर्भित अधिकारियों के पढ़ने से, जो तथ्य सामने आता है वह यह है कि दस्तावेज़ की प्रकृति के बारे में इस मुद्दे को तय करने के लिए कि क्या ऐसा दस्तावेज़ सशर्त बिक्री द्वारा बंधक का दस्तावेज़ है या

क्या यह पूरी तरह से बिक्री का दस्तावेज़ है, दस्तावेज़ का पाठ और पक्षों का इरादा सर्वोपरि महत्व का है। इस तरह के विचार पर परिणाम पूरी तरह से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। इस कारण से, किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, पक्षों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकीलों द्वारा उद्धृत अधिकारी केवल सीमित सीमा तक ही न्यायालय की मदद करेंगे।

33. मामले के तथ्यों पर आते हुए, शुरुआत में, मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय में अपीलार्थियों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील का पक्षकारों के मौखिक साक्ष्य पर विचार नहीं करने का आग्रह बहुत महत्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि पक्षों के बीच विवाद के निर्धारण के लिए, यह प्रदर्श-सी की व्याख्या से संबंधित है और मौखिक साक्ष्य का उक्त व्याख्या से कोई लेना-देना नहीं है। इसी तरह, यह न्यायालय दो अधीनस्थ अदालतों द्वारा अन्य मुद्दों के बारे में तथ्यों पर दर्ज अन्य निष्कर्षों में नहीं जाना चाहेगा। इस कारण से, इस मुद्दे पर अधीनस्थ अदालतों की संतुष्टि को दूसरी अपील में फिर से नहीं खोला जा सका।

34. आगे बढ़ने से पहले, पक्षों के इरादे को इकट्ठा करना फायदेमंद होगा। यह देखा जाना है कि क्या दस्तावेज़ टी. पी. अधिनियम की धारा 58 (सी) के प्रावधान के तहत आएगा। अब, पक्षों के इरादे को प्रश्नगत दस्तावेज के पाठ से एकत्र किया जाना है। यदि शब्द स्पष्ट हैं, तो शब्द प्रबल होंगे और पक्षों के इरादे को इकट्ठा करने के लिए आसपास की परिस्थितियों को देखने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। जब किसी दस्तावेज़ का पाठ अस्पष्ट होता है, तो केवल तब आसपास की परिस्थितियों को देखने की अनुमति है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि पक्षों का क्या इरादा था।

35. इसके अलावा, एक पूर्ण हस्तांतरण जो स्पष्ट रूप से देनदार और लेनदार के संबंध को नहीं दर्शाता है, केवल इसलिए बंधक नहीं बन जाएगा क्योंकि विक्रेता यह

निर्धारित करता है कि उसे फिर से खरीदने का अधिकार होगा। इस प्रकार, दस्तावेज़ का अर्थ सबसे महत्वपूर्ण है। इसी तरह, एक कथित बंधक विलेख बाहरी और अप्रासंगिक विचारों के संदर्भ में बिक्री का दस्तावेज नहीं बन सकता है। यदि बिक्री और पुनर्खरीद के लिए समझौता अलग-अलग दस्तावेजों में सन्निहित है, तो लेन-देन एक बंधक नहीं हो सकता है, लेकिन इसके विपरीत/ बातचीत हमेशा सच नहीं है जैसा कि ***चुनचुन झा (उपर्युक्त)*** के मामले में अभिनिर्धारित किया गया था। यदि पुनर्खरीद की शर्त दस्तावेज़ में सन्निहित है, जो बिक्री को प्रभावित करने का प्रभाव या तात्पर्य है, तो यह निर्माण के लिए एक मामला है जो अभिप्रेत था।

36. संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 पर मुल्ला की टिप्पणी में कानून की स्थिति को और स्पष्ट किया गया है, जिसमें "सशर्त बिक्री द्वारा बंधक" और "पुनर्खरीद के विकल्प के साथ बिक्री" के बीच अंतर करने वाली विशेषताओं को नीचे सूचीबद्ध किया गया हैः

> *"(i) सशर्त बिक्री के साथ एक बंधक में, एक देनदार और एक लेनदार का संबंध बना रहता है, जबकि पुनः खरीद के विकल्प के साथ एक बिक्री में, ऐसा कोई संबंध नहीं है और पक्ष एक समान आधार पर खड़े हैं।*
>
> *(ii) सशर्त बिक्री द्वारा एक बंधक एक ही दस्तावेज़ द्वारा प्रभावित होता है, जबकि पुनर्खरीद के विकल्प के साथ एक बिक्री आम तौर पर दो स्वतंत्र दस्तावेजों की मदद से प्रभावित होती है।*
>
> *(iii) सशर्त बिक्री वाले बंधक में ऋण बना रहता है क्योंकि यह एक उधार व्यवस्था है, जबकि पुनर्खरीद के विकल्प वाली*

बिक्री में कोई ऋण नहीं होता है, बल्कि बिक्री के लिए एक प्रतिफल होता है।

(iv) सशर्त बिक्री वाले बंधक में, प्रतिफल की राशि बाजार में संपत्ति के मूल्य से बहुत कम होती है, लेकिन पुनर्खरीद के विकल्प वाली बिक्री में प्रतिफल की राशि आम तौर पर संपत्ति के मूल्य के बराबर या उसके बहुत करीब होती है।

(v) सशर्त बिक्री के साथ एक बंधक में, चूंकि यह एक बंधक लेनदेन है, इसलिए इसके भुगतान के लिए अनुबंध में निर्धारित समय की समाप्ति के बावजूद मोचन का अधिकार बंधककर्ता के पक्ष में बना रहता है।

37. चूंकि प्रदर्श-सी महत्वपूर्ण दस्तावेज है, इसलिए आगे के संदर्भ के उद्देश्य से उसी के लिप्यंतरण को पुनः प्रस्तुत किया जाता हैः

"वजिमे मन मोकिरा देन महजनान हो गया है जिसका अदायकारी जरूरी है और सरेदस्त भी कुछ रूपया की जरूरत है वास्ते करने अन्जाम यादी अपने पेसर खुद जो बेला करने इन्तकाल जायदाद खाना नं. 5 के अन्तजाम होना दूसवार है चुनान्चे मन मोकीरान ने मोकीर अलह से इस्तदोआ किया के जायदाद खाना नं. 5 बय करा लिजिये लेकिन मन मोकिरा को एक मौका दीजीये के अगर पांच बरसा के अंदर रूपया अदा कर सकें तो आप वापस ले लिजीयेगा जिसको मोकीर अलह ने कबूल वो मन्जूर किया। बनावीर मन मोकीरा बखुशी यो रजामंदी अपने जायदाद खाना नं.-५ जिसपर दखल कब्जा मन मोकीरा का बेला सरोकार दूसरे के रहता चला आता है उसको बदस्त

मोकिर अलह बयमैयादी कर लिया बय एवज उसके मो. ७३३७ रूपया के आधा उसका मो. ३६६८.५० रूपया होता है हाथ माल के मोकीर अलह मजकुर से कुल जरसमन हसब तफसील मोफसिले जैल के वसुल पा लिया अब खर मोहरा बाकी नहीं है वो न रहा। बनावीर एकशर मातबीर करते है वो लिख देते है कि मोकिर अलह बहैसियत बयदार उपर सयमोवइया ब अदाय देने मोजरइया काबिज दाखिल हो कर व रह कर महासील आमदनी से मतसरिफ हुआ करे वो टैक्स म्युन्सिपालीटी अदाय किया करें यो नाम अपना म्युन्सिपालीटी या जहां जरूरत हो दर्ज करा लेवें वो अब बहैसियत मालीक मोकतील दखल कब्जा अपना जारी रखें। मनमोकिर वो अब अंदर सयमोवइया कोई हकियत बाकी नहीं है वो न रहा, जो कुछ हक हकुक मनमोकिर को हासिल था व बजरिये तहरीर वोसिका हाजा बहक मोकिर अलह मुन्तकिल हो गया। आइंदे मनमोकीरा वो वारिसान मनमोकिरान किसी किसीम का कोई दावी देय नहीं करेंगे अगर करें तो रद वो बातील समझा जाएगा वो होगा अगर मनमोकिरा अंदर पांच वर्ष अज तारीख इमरोजे लगायत तारीख २४.०३.१९५८ ई. के कुल जरसमन वैयमियादी निज्द मोकिर अलैह नकद एक दस्त एवं एक मुश्त अदाय बेबाक कर देंगे तो मोकिर अलह बय वापस कर देंगे वरना हकीयत मोकिर अलह का बहरहाल हमेशा के लिए मोकसिल समझा जायेगा। बनावीर चन्द कलमा बतरिक वोसीका बयमैयादी लिख दिया के वक्त पर काम आवे।"

दस्तावेज़ का अनुवाद (प्रदर्श-सी) इस प्रकार है;

"कि, निष्पादक पर बहुत अधिक ऋण है, जिसका भुगतान आवश्यक है। और उसे अपनी व्यक्तिगत आवश्यकता को पूरा करने के लिए धन की सख्त आवश्यकता है। धन की व्यवस्था के बारे में निष्पादक ने अपने पिता से यही पूछा, जिस पर उन्होंने जवाब दिया कि आवश्यक राशि की व्यवस्था करने का कोई तरीका नहीं है, केवल 'खाना नं.-5' में उल्लिखित संपत्ति को बेचना ही एकमात्र विकल्प है। इसलिए, निष्पादक ने विक्रेता/खरीदार से अनुरोध किया कि वे 'खाना नं.-5' में उल्लिखित संपत्ति को खरीदें। साथ ही, निष्पादक ने प्रार्थना की कि "उसे एक मौका दिया जाए कि यदि वह 5 साल की अवधि के भीतर ली गई राशि वापस करता है, तो यह विक्रेता/खरीदार द्वारा स्वीकार्य होगा, जिस पर विक्रेता/खरीदार सहमत हुए और नियमों और शर्तों को स्वीकार किया।

कि, आपसी समझ के साथ, पूर्ण सचेत दिमाग और पूर्ण खुशी और सहमति के साथ निष्पादक ने विक्रेता/खरीदार के साथ 'बाई मियादी' (5 साल की अवधि के लिए पट्टा समझौता जैसा कि ऊपर कहा गया है) में प्रवेश किया है और 'खाना नं.-5' में उल्लिखित संपत्ति के लिए 'बाई मियादी' विलेख लिखा है, जिस पर वह शांतिपूर्वक पूर्ण कब्जे में आ रहा है। उक्त संपत्ति के बदले में निष्पादक को विक्रेता/खरीदार से 7337/- रुपये की राशि प्राप्त हुई है (जिसका आधा रु. 3668.50/- रुपये है) अब, विक्रेता/खरीदार के पास कोई एक पैसा नहीं बचा है और न ही बचेगा। निष्पादक सहमत होता है और उसने लिखा है कि उक्त क्षमता में विक्रेता/खरीदार उक्त संपत्ति पर कब्जा करके अपनी इच्छा के अनुसार उपजाऊ फसलों और उक्त कृषि भूमि

संपत्ति की कमाई का उपयोग कर सकता है। और साल दर साल नगरपालिका करों का भुगतान करें। विक्रेता/खरीदार नगर पालिका कार्यालय में और जहां भी आवश्यकता हो, अपना नाम पंजीकृत करा सकता है और उसे उक्त भूमि पर कब्जा बनाए रखना चाहिए। अब, निष्पादक का खान सं.-5' में उल्लिखित उक्त संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है और न ही होगा। इस संपत्ति के संबंध में अधिकार जो निष्पादक के पास थे, इस 'बाई मियादी' विलेख के माध्यम से विक्रेता/खरीदार को हस्तांतरित किए जाते हैं। आज से निष्पादक या उसके उत्तराधिकारी विलेख संपत्ति पर कोई दावा नहीं करेंगे। यदि वे ऐसा करते हैं, तो यह अवैध और अमान्य होगा। यदि निष्पादक 05 वर्षों की निर्धारित समय अवधि के भीतर विक्रेता/खरीदार को एकमुश्त में ली गई पूरी राशि वापस कर देता है, जो आज से 24-03-1958 तक प्रभावी है, तो विक्रेता/खरीदार इसे स्वीकार करेगा और ली गई संपत्ति को वापस कर देगा। यदि निष्पादक दिए गए धन को वापस नहीं करता है, तो दी गई संपत्ति विक्रेता/खरीदार की मानी जाएगी।

कि, आपसी सहमति से यह 'बाई मियादी' विलेख लिखा जाता है, ताकि यह भविष्य में उपयोगी हो सके।"

38. अब, उपरोक्त दस्तावेज़ प्रदर्श-सी का पाठ कुछ बिंदुओं को बहुत स्पष्ट करता हैः

(i) बीबी अकीकुल निसा ने थाना नंबर 5 की संपत्ति को द्वारिका प्रसाद को एक शर्त के साथ बेचने की पेशकश की कि अगर वह पैसे वापस करने में सक्षम है, तो संपत्ति का फिर से हस्तांतरण किया जाएगा।

(ii) इस तरह, वाद संपत्ति को द्वारिका प्रसाद को 7337/- रुपये की प्रतिफल राशि के लिए हस्तांतरित कर दिया गया था और खरीदार उसी के कब्जे में आ गया और हस्तांतरित संपत्ति के संबंध में बीबी अकीकुल निसा का अधिकार, स्वामित्व और कब्जा समाप्त हो गया।

(iii) बीबी अकीकुल निसा ने यह भी स्पष्ट किया कि द्वारिका प्रसाद नगरपालिका के अभिलेखों में अपना नाम दर्ज कर सकते हैं और नगरपालिका करों का भुगतान करना शुरू कर देंगे और बीबी अकीकुल निसा को जो भी अधिकार उपलब्ध थे, वह द्वारिका प्रसाद को मिलेगा।

(iv) यह भी घोषित किया गया है कि यदि निष्पादक अकीकुल निसा के उत्तराधिकारियों द्वारा कोई दावा किया गया था, तो वह अमान्य होगा। यदि अकीकुल निसा 24.03.1958 तक एक बार में प्रतिफल राशि को वापस करेगी, तो संपत्ति का फिर से हस्तांतरण किया जाएगा, अन्यथा, द्वारिका प्रसाद का स्वामित्व आने वाले सभी समय तक जारी रहेगा।

39. उपरोक्त बिंदु दस्तावेज़ की प्रकृति को स्पष्ट करते हैं कि यह पुनर्खरीद के अधिकार के साथ बिक्री का दस्तावेज़ है और न कि सशर्त बिक्री के साथ बंधक का दस्तावेज़। इस अंतर्विरोध के बावजूद कि यह एक ज़ेरपेशगी विलेख है, पाठ से यह स्पष्ट होता है कि बीबी अकीकुल निसा ने मूल प्रतिवादी के पक्ष में मुकदमे की संपत्ति पर अपने अधिकार, स्वामित्व और हित को छोड़/त्याग दिया था। मूल प्रतिवादी जो अधिकार (नगरपालिका रिकॉर्ड) के अभिलेख में अपना नाम दर्ज कराता है, यह स्थापित करता है कि बीबी अकीकुल निसा ने मूल प्रतिवादी के पक्ष में अपने अधिकारों का त्याग कर दिया क्योंकि एक बंधककर्त्ता बंधकदार को बंधककर्त्ता के स्थान पर अपना नाम उत्परिवर्तित कराने की अनुमति नहीं देता था। इस प्रकार, मूल प्रतिवादी को

खरीदार के रूप में विलेख में उल्लिखित संपत्ति पर अपना अधिकार, स्वामित्व और कब्जा मिला। एक और बात है जो इस तथ्य की ओर भी इशारा करती है कि दस्तावेज़ बिक्री का दस्तावेज़ था और न कि बंधक का। उक्त दस्तावेज़ को निष्पादित करने से पहले, बीबी अकीकुल निसा ने 3,200/- रुपये की प्रतिफल राशि के लिए 03.01.1950 को एक बंधक विलेख निष्पादित किया, उसी संपत्ति के लिए। तीन साल बाद बीबी अकीकुल निसा को दोगुने से भी अधिक राशि का भुगतान किया गया, हालांकि बंधक की राशि, यानी 3,200/- को समायोजित किया गया था। यह भी ध्यान में रखा जाने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है, यदि विलेख एक ज़र्पेश्गी विलेख था जैसा कि दावा किया गया था, तो वह संपत्ति जिसे रु. 3,200/- रुपये की राशि के लिए बंधक रखा गया था फिर से तीन साल बाद, 7337/- रुपये की राशि के लिए बंधक नहीं रखा जाएगा। यह बिक्री के लिए एक पर्याप्त विचार था और वादी/अपीलार्थियों के लिए विचार की अपर्याप्तता के बारे में विद्वान वरिष्ठ वकील का तर्क करना उचित नहीं है। पाठ से यह भी स्पष्ट है कि देनदार और उधारकर्ता का कोई संबंध नहीं है। इसके अलावा, विलेख में मोचन का कोई अधिकार नहीं रखा गया है, क्योंकि यह उल्लेख किया है कि यदि बीबी अकीकुल निसा मूल प्रतिवादी को एक बार में कुल प्रतिफल राशि वापस करने में विफल रहती है, तो हस्तांतरित संपत्ति पर उसका आगे कोई अधिकार नहीं होगा।

40. यह सच है कि टी. पी. अधिनियम की धारा 58 (सी) के प्रभाव में आने के बाद, एक धारणा है कि पुनः खरीद के विकल्प के साथ बिक्री आम तौर पर दो स्वतंत्र दस्तावेजों द्वारा प्रभावित होती है, लेकिन जैसा कि ***चुनचुन झा*** (उपरोक्त) के मामले में निर्धारित किया गया है कि सिर्फ यह तथ्य कि केवल एक ही दस्तावेज होने का मतलब निश्चित रूप से यह नहीं है कि यह बंधक होना चाहिए और बिक्री नहीं हो सकती है।

41. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, अपीलार्थियों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा ***पटेल रविभाई भुलाभाई (मृत) विधिक प्रतिनिधिक द्वारा*** (उपर्युक्त), ***श्रीनिवासैया*** (उपर्युक्त), **चुनचुन झा** (उपर्युक्त), ***वंचलाबाई रघुनाथ इथापे*** (उपर्युक्त), ***मधु लाल सिंह*** (उपर्युक्त), ***गणपति बाबजी आलमवार (मृत) विधिक प्रतिनिधिक रामलू और अन्य द्वारा*** (उपर्युक्त) और ***भास्कर वामन जोशी (मृत) और अन्य*** (उपर्युक्त) के मामलों में निर्णय पर रखी गई निर्भरता की यह देखते हुए कोई मदद नहीं है कि वर्तमान मामले के तथ्य काफी अलग हैं और उसी समय ***भोजू मंडल*** (उपर्युक्त) और ***प्रकाश (मृत) विधिक प्रतिनिधिक द्वारा*** (उपर्युक्त) पर उत्तरदाताओं के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा रखी गई निर्भरता सबसे उपयुक्त है।

42. इस प्रकार, उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रदर्श-सी पुनर्खरीद का विकल्प के साथ बिक्री का एक दस्तावेज है और इसे सशर्त बिक्री द्वारा बंधक के दस्तावेज के रूप में निष्पादित नहीं किया गया था। इसलिए, तैयार किए गए कानून के महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर तदनुसार दिया जाता है। इसके अलावा, मौखिक साक्ष्य के बारे में आपत्ति को पहले के पैराग्राफ में पहले ही खारिज कर दिया गया है और पहले ही नकार दिया गया है।

43. उपरोक्त तथ्यों और संदर्भों में, मेरी सुविचारित राय है कि दोनों, विद्वत विचारण न्यायालय के साथ-साथ विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय ने एक सही निष्कर्ष दर्ज किया है कि प्रदर्श-सी पुनर्खरीद के अधिकार के साथ एकमुश्त बिक्री का विलेख है और सशर्त बिक्री द्वारा बंधक का दस्तावेज नहीं है और इसलिए, विद्वत प्रथम अपीलीय न्यायालय के साथ-साथ विद्वत प्रथम विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को बरकरार रखा जाता है।

44. तदनुसार, वर्तमान दूसरी अपील किसी भी योग्यता से रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

आशीष/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।